अमृत कलश

स्व. श्री श्यामाचरणदत्त पन्त कृत
श्रीमद्भगवतगीता का कुमाऊनी पद्यानुवाद

प्रथम संस्करण 1961 ;संवत 2018

ए.वी. प्रेस, नैनीताल

समर्पण

त्वदीय वस्तु गोविन्दः तुभ्यमेव समर्पयेत्

संसार का मनुष्यन कैं अमरत्व प्रदान करणी देश में आज फलासक्ति का कारण भ्रष्टाचार फैली गयो छ। ऐसा समय में जो मनस्वी जन अमर आचरण धरनी गरुड़गामी गोविन्द स्वरूप उन सब जनन का करकमलन में यो ' अमृतकलश ' श्रद्धा सहित सादर समर्पित छ।

श्यामाचरणदत्त पन्त

अमृत कलशैकि सार्थकता

अपणा अमृत वचन सुणाई श्री भगवान लै अर्जुन थें पुछौ :

क्ये एकाग्र चित्त लै अर्जुन
त्वी लै यो सब योग सुणौ

यै का उत्तर में अर्जुन लै यै की सार्थकता प्रकट करी

मोह नष्ट भै ज्ञान हई गो,
तुमोर प्रसाद मेरो अच्युत!
थिर छूँ मैं,संदेह नाथि क्वे,
पालन करुल बचन तुमरा

पैल अध्याय
अर्जुन विषाद योग

धृतराष्ट्र बलाण
ऊ धर्मक्षेत्र जो कुरुक क्षेत्र, वाँ लणै करण हूँ एकबटीण।
मेरा औ पांडु का च्यल नैल क्ये करौ, सुणा सब, ओ संजय।1

संजय बलाण
देखी पांडव सेना जस्सै, वाँ व्यूह रची दुर्योधन लै,
आचार्य द्रोण का पास पुजौ, राजा लै तब यो वचन कया। 2

गुरुदेव देखि ल्हियो यो सेना, पांडु का च्याल नै की महान
यो द्रुपद पुत्र को व्यूह रची, उ तुमरै शिष्य छ बुद्धिमान। 3

याँ शूर महान धनुर्धारी छन भीम और अर्जुन जसै बली
यों सात्यकि, यो राजा विराट ऊँ द्रुपदपुत्र छन महारथी। 4

ऊँ धृष्टकेतु औ चेकितान ऊँ काशिराज दन वीर्यवान
वाँ पुरजित कुन्तिभेज लै छ, सब शैव्य जसे नरपुंगव छन 5

पराक्रमी अति युधामन्यु औ उत्तमौजा बली उसै
अभिमन्यु द्रौपदी पाँच पुत्र, सब्बा सब छन यों महारथी 6

अब हमरि तरफ जो छन प्रधान, मेरी सेना का रणनायक
मैं सुणू तुमन आचार्य देव, जैले तुम सब कुछ समझि लियौं ।7।

तुम आपूँ आफी, बड़बाज्यु भीष्म, छन कर्ण और कृप रण विजयी ।
छS अश्वत्थमा यो विकर्ण,ऊ भूरिश्रवा लै उसै कईं । 8

और ले भौतै नैक पैक छन, मेरि तैं प्राण हथेलि में धरी
सब प्रकार हथियार मार में वीर चतुर लड़नी भिड़नी ।9

अपर्याप्त छ हमरो दल बल रक्षक यैका भीष्म हमार
छ पर्याप्त पै उनरो दल बल, रक्षक बणी छ भीम उनर ।10

सब द्वारन बै, सबै तरफ बै आपणी आपणी जाग में थिर रै
सबै जणी मिलि सब प्रकार लै, करन भीष्म ज्यू की रक्षा ।11

वीको हर्ष बड़ूणा कीं तैं, कुल का बुड़ बड़बाज्यू लै।
गरजि घुराट करौ स्यूँ को जस, शंख बजै दी बड़ो ठुलो। 12

तब वाँ कतुकुप बाजि गे शाँक नड.ार तूरी रणसिंग
रण बणाट एस भयो भयंकर गाजि बे सब आकाश मही। 13

तब स्याता घ्वाड़ जोतिया जै में, बैठी दिव्य महारथ में

माधव और वीर अर्जुन लै, आपणा आपणा शंख बजै। 14

पांचजन्य कैं हृषीकेश लै, देवदत्त कँ अर्जुन लै
पौंड्र नाम का महाशंख कैं बजै दी भीम वृकोदर लै। 15

कुन्तीपुत्र युधिष्ठार राज् को बाजो शंख अनन्त विजय
शंख सुघौष नकुल को बाजो, मणि पुष्पक सहदेव बजै। 16

महा धनुर्धर काशि राज लै और शिखंडी महारथी
धृष्टद्युम्न लै औ विराट लै औ अजेय उ सात्यकि लै। 17

राजा द्रुपद, द्रौपदी च्याल नैल, पुत्र सुभद्रा को अभिमन्यु
और सबन लै हे पृथ्वीपति! आपणा आपणा शंख बजै। 18

कोलाहल वाँ भयो रणी गे कल्ज फाटण लाग कौरवानां
धरती औ आकाश कली गे, घोर जोर शंखध्वनि लै । 19

देखो सज्जित कौरव दल कैं शस्त्र चलूणा हूँ तैयार
महारथी कपिध्वज अर्जुन लै, आपण धनुष कँ उठै ल्हियो।20

संजय बलाण
सुणौ महीपति! तब अर्जुन लै, हृषीकेश थैं क्वे यसिकै

अर्जुन बलाण
हे अच्युत! मेरा यै रथ कैं द्वि सेना का बीच धरौ ।21

जै में यो मैं भलि कै देखि ल्यूँ युद्ध करण हूँ को उत्सुक
कै कै दगै लड़ैं ल्हिणि होली, मै कन लै रण आंगण में ।22

देखूँ मैं इन रण करनेरन, याँ जो सब एकबटी रयीं
दुर्योधन दुर्बुद्धि युद्ध में प्रिय करणी, धै को को छन। 23

संजय बलाण

यो सुणि गुड़ाकेश का मुख बै, हृषीकेश तब हे भारत!
द्वि सेना का बीच बढ़ै लै, थापि दी उतकें उत्तम रथ। 24

भीष्म द्रोण का सामणी जतकैं ठुल ठुल सब्बै राजा लोग
उतकैं क्वे माधव लै अर्जुन! यां छन कौरव एथके देख। 25

तब वाँ अर्जुन लै देखे, छन का्क ज्यठबाज्यु बड़बाज्यू लै
गुरु आचार्य ममा और भाई, च्याल् नाती आपणा साथी। 26

मित्र ससुर बान्धव गण ठाड़ छन द्वियै फौज में कटणै तें
जब देखों कुन्ती नन्दन लै, आपणा भई बिरादर यों। 27

अत्ती ममता मोह छई ग्वे शोक ख्न्न यो कूण लागो
अहो कृष्ण! इन स्वजनन कैं देखि, युद्ध करण हूँ समुपस्थित। 28

शिथिल शरीर हुणा यो मेरो, खापसुकण लागि रै छण छण
कंप छुटणि लागि रैछ् गात में, आंड0 में सब कान बकुरि गईं।29

हाथ बै यो गांडीव ले छुटणौं सारह देह में आग हैगे
ठाड़ हुण में चक्कर जो ऊणों, भ्रमित हई गो मेरो मन। 30

सब लक्षण मैं देखण लागि रयूँ, विपरीतै छन हो केशव
मैं त कोइ लै श्रेय नि देखन्यू, इन स्वजनन कँ मारण में। 31।

क्वे लालसा न्हेंति विजय की, राज्य और सुख भोगन की
हे गोविन्द राज लै के होल्, क्वे भोगन क्वे जीवन लै ।32।

जनरी तैं हम इच्छा करनू, राज्य और सुख भोगन की
ऊँ प्रियजन सब युद्ध हुँ ठाड़् छन,धन जीवन कँ छोड़ण हुणी ।33।

काक् ज्यठबाज्यु गुरु जन बड़बाज्यू, भाण्ज भतिज नाती पोता
ममा ससुर औ साला,चेला सबै निकट संबंधी छन। 34

यदि योमकैं मारि लै दिन त इनन नि मारूँ मधुसूदन
तीन लाक का राजै तैं लै, यै धरती की बात क्ये क.. । 35

कौरव ने कैं मारण में लै क्वे आनन्द जनार्दन छ
यै हत्या लै पापै लागलो, यदपि आततायी यो छन। 36

तदपि उचित न्हाँ इनन मारणों, कौरव हमरे बान्धव छन
आपण गोत्र की हत्या करि हो, कसिकै सुख होल कौ माधव।37

यद्यपि यो अन्धा नि देखन भ्रष्ट बुद्धि लोभा कारण
महा दोष कुल नाश करण को, मित्र द्रोह करणा को पाप।38

पै हम तौ जो यो सब जाणन्यू कुलक्षय का इन दोषन कँ
किलै पड़ि जान्यू यै भ्योलन आब, छन आँखनै हे जनार्दन! 39

कुल काक्षयलै नाश हुनी तब, कुल का सबै सनातन धर्म।
कुल का धर्मनाश लै बढ़ि जाँ कुल में कुल अधर्म को जोर। 40

कृष्ण! अधर्म फैलि जाणा पर कुल नारी दूषित हूनी
नारी भ्रष्टा हुण पर माधव! हुनी वर्णसंकर उत्पन्न !41

वर्ण संकरन का वीलै सब कुल घाती कुल नरक जानी
सबै पितर लै पतित हुनी हो, तर्पण पिंड लुप्त हुण पर।42

वर्ण संकरन कँ फैलूणी कुल घातिन को दोषन लै
जाति धर्म कुल धर्म बुसीनी, पुष्त पुष्त बै जो चलि ऐ ।43

कुल का धर्म उजड़ि जाणउपर फिरि मैसन की हे जनार्दन!
नित्ये नरक निवास हुँछौ हो, हम लै सुणि राखो छ यै। 44

अहो महान पाप करणा तैं हम याँ कस एकबटी रयाँ
लोभ करी जो राज सुखन को स्वजन हनन हूँ उद्यत छूँ। 45

शस्त्र ल्हिई यदि यो कौरव गण शस्त्रहीन मैं कन मारौ
यै में क्षेम कुशल छ मेरी बचि जूलो मैं पापन बै। 46

संजय बलाण

यो कै अर्जुन युद्ध क्षेत्र में, रथ में आपणा बैठि गयो
हाथ को धनुष बाण भिं खेड़ि दी खेद खिन्न मन में है ग्वे।

अमृत कलश
दुसर अध्याय
सांख्य योग

संजय बलाण
दशा बड़ी दयनीय हई भै अश्रुभरी आँख दुःख मुनी
शोक छई अति वी अर्जुन प्रति मधुसूदन यो वचन बलाण।1।

श्री भगवान बलाण
काँ बट यो अज्ञान मोह भै, संकट विकट समय अर्जुन
बदनामी जड़ चौपट धरणी, घोर अधोगति करणी यै।2।

अरे पार्थ तू नि हो नपुंसक, यति यो त्वे शोभा नि दिन
छोड़ यो तुच्छ हृदय दुर्बलता, अरे परंतप ठाड़ उठ रे।3।

अर्जुन बलाण

कसिक भीष्म कैं, कसिक द्रोण कैं, रण में मारूँ मधुसूदन!
कसिक बाण ल्ही युद्ध करुँल जो पूजनीय छन अरिसूदन ।4।

मारूँ महात्मा इन गुरुजनन कैं
यै है भलोभीख मांगि खूँ दुनी में
हुन अर्थकामी गुरुन मारणा पर
इनार् ल्वे में सानिया भौगै त भोगुला ।5।

यो लै नि जाणना क्ये में भला छ
जय हो हमरि या उनरी विजय हो
जनन बिना हम रूणै नि चाना
ऊँ लाड़िला सब लड़ैं हूँ अड़ी छन।6।

स्वभाव मेरोमलिन क्षीण है गो,
कर्तव्य की तैं ऐसो मोह है गो।
जे श्रेय छ उ निश्चित बताओ
प्रभो! शिष्य छूँ मैंतुमरी शरण दूँ ।7।

सुकै दिणी दाह दुख देह को यो
जालो कसिक क्ये समझे नि ऊनो
यै लोक का राज्य सुख भोग साथै
सुरलोक प्रभुता पे ले नि जालो।8।

संजय बलाण
गुड़ाकेश लै हृषीकेश कैं आपणा ऐसि कै वचन सुणै।
'हे गाविन्द मैं युद्ध नि करन्यू' कइ मौन ऊ हई गयो । 9।

तब बलाण फिर हृषीकेश वाँ, हँसनि मुखड़ि लै ' हे भारत'

द्वि सेना का बीच का बीच खिन्न मन बैठी अर्जुन थैं ऐसिकै।10।

श्री भगवान बलाण

तू अशोच को शोच करै फिर ज्ञानिन की जै बात करै
ज्ञानी यै को शोक नि करना चाहू कोई बचौ मरौ।11।

मैं, तू औ यो सब राजा जन पैली नि छिया – एसो न्हाती
एस लै न्हा– अब पछा अघिन हूँ, हमन में कोई नी रौलो ।12।

देही का पै देह मं जसिकै बचपन ज्वानी बुढ़ाप हुँ छ
उसीकै दुसरो देह मिलण पर कभैं वीर कैं मोह नि हुन ।13।

मात्रास्पर्श त कौन्तेय! छन ठंड गरम सुख दुख दिणियां
ऊनी जानी अनित्य कईनी इनन सहन कर हे भारत।14!

जै कैं सब यो मथित नि करना पुरुषश्रेष्ठ! वी पुरुष भयो।
सुख दुख में वी धीर, एकरस अमृतकलश कैं उठै सकौं ।15।

असत कभैं छन हे नि सकनो सत उस्सी कै निछन नि हुन।
इन द्वीनों को अन्त समझनी, जाणनी तत्व तत्वदर्शी ।16।

अविनाशी तू पछाणि ल्हे वी कैं, जै बट सब यो फैलि रछौ
वी अव्यय को नाश करण हूँ कोई लै कैं समथ्र न्हांति।17।

नश हुणी यो सबै देह भै स्वामी तन को नित्य कईंछ
अविनाशी औ अप्रमेय छ, यै वी लै तू लड़ भारत! ।18।

जो यै कैं मारणी बतूँछ और जो यै थैं मरिगो कूँछ
यो द्वियै क्ये जाणने न्हातन मारन न्हाँ, ऊ मरनै न्हा।19।

न जन्म ल्हीनो न मरनो कसीकै,
ऐसो लै न्हा ऊ है फिरि नि होलो
नित्यै अजन्मा छ शाश्वम पुराणो
शरीर छुटि जाँ पै ऊ अमर छS।20।
जैल् जाणि हाल्छ पुरुष भितर यो
अज अविनाशी अव्यय छ
की धैं पार्थ कसिक पुरुष ऊ
कै मारल? कै मरवै द्योल्? ।21।

वस्त्रन पुराणा जस्सिकै छोड़ी
नयां दुसर सब नर पैरि ल्हीनी
उसी कै जरजर शरीर त्यागी
कोमल नयां कै धरि ल्हीं छ देही।22।

नि काटिसकन हथियार कोई ले,
नि जले सकनो आग वी कैं
निइगलैसकनो पाणि कस्सी कै
नि शोखि सकनों हवा वी कैं ।23।

यो नि फटणी यो नि जलणी
नि भिजणी, नी सुकणी छ
नित्य सर्वगतथिर रूणी छS
अचल सनातन यो ई छS ।24।

यो अव्यक्त अचिन्त्य कई जाँ
पुरुष भितर अविकारी छ
ऐसो ये कन पछाणि भली कै
शोक करण तेर हूँ कसिकै ? ।25।

यदि तू समझै सदाजन्म ल्हीं
और सदा यो मरनै रूँछ
तब लै महाबाहु! कस्सी कै
शोक करण तेरो उचितै न्हाँ ।26!

जन्मल्हिणी निश्चय ही मरलो
मरी लै फिरि फिरि जन्म ल्हेलो
यै को जब परिहार न्हाति क्ये
शोच करण तेरो कसिके हूँ ।27

सब प्राणी अव्यक्त छि पैली,
बीचम है गीं देखां भरत
पछा मरण पर फिरि लुकि जाला
तब चिन्ता क्ये बातै भै ।28।

आश्चर्य जस् क्वे यै देखनो छ.
कोई दुसर यै आश्चर्य कूँ छ S
आश्चर्य यै कन फिरि क्वे सुणन्छ S
देखि कै सुणी लै यै क्वे नि जाणनो ।29।

देही को वध हई नि सकनो सबने देहन में भारत
सब प्रणिन की तैं यै वीले शोक करण तेरो उचितै न्हा। 30।

देखि आपणों कुल धर्म लै त्वे कैं
हिम्मत हारी कामण नि चैन
क्षत्रिय की तैं धर्म युद्ध है
श्रेयस्कर कत्ती क्ये न्हा। 31।

आापण आफी मिलि गई एती कैं
स्वर्गा दरवाज खुली हुई
भाग्यवान छन जो क्षत्रिय जन
उननै मिलनी युद्ध यसा। 32।

अगर हनि मानलै आपण धर्म तू
और नि करलै युद्ध भलिक
करि अधर्म अपकीर्ति कमालै

तब जै लागोल पाप कतुक ।33।

जो अपकीर्ति सब लोग उठाला
अघिलैं तैं ले अमिट होली
सेंभावित अकीर्ति है तऽ
मौत भौत ही भली भई ।34।

डर गो अर्जुन रण बै भाजि गो
कर्णादिक सब महारथी
कौल जबै तब मान रौल काँ?
हलकी है जालि कतुक तेरी। 35।

वाक्य कुवाक्य कौल बहुतै जब
तेरा विरुद्ध तेरा रिपु लोग
पौरुष कीलै निदा करला
यै है ठुल दुख और क्ये हो? ।36।

मरि जालै सिद स्वर्ग हूँ जालै,
जीत इहोली ज राज करै।
यै वीलै उठ! कोन्तेय! तू
युद्ध करणौं करि निश्चय। 37।
विजय पराजय लाभ हानि में
सुख दुख एकनससे करि ल्हे
यै प्रकार यदि युद्ध में जुटि जा
कभैं नि लागि सकला त्वे पाप।38।

याँ तक यो सब ज्ञान कई गो
बुद्धि योग आब अघिन हूँ सुण
जै योगा अनुसार पार्थ! तू
कर्मा बन्धन काटि देलै ।39।

नाश नि हुन आरंभ करी को
विघन अघिल लै है नि सकन
अल्प लै पालन करी धर्म यो
तारण करौं महा भय बै।40।

व्यवसायात्मिक निश्चय करणी
एक बुद्धि हूँ कुरु नन्दन!
अन्त अनि मिलणी बहुतै शाखा
अव्यवसायिप् मति की छन। 41।

लोभ देखूणी कुसुमित वाणी
कूनी यै सब अविवेकी।
वेद वाद रत कर्म कांड में
अघिन और कून्हीं के न्हा।42।

स्वर्ग और सुख भोग लालसा

जन्म कर्म फल दिणी सदा
मनो कामना पूर्ण करूणी
अनुष्ठान बहुतै करनी ।43।

लिप्त सदा ऐश्वर्य भोग में
चित्त विवेक सब हरी हुई
व्यवसायात्मिक बुद्धि की उनरी
लागि नि सकनी समाधि कभैं ।44।

त्रिगुण भरी छन वेद विषय सब
त्रिगुण रहित हो तू अर्जुन!
सतोगुणी निर्द्वंद्व सदा रौ
आत्म निष्ठ हो सिद्धि तजी।45।

चारै तरफ पाणी पाणि है जौ
धार् नौलन को तब क्ये काम
ब्रह्मज्ञान है जाण पर उसिकै
सब वेदन की छऽ के बात? ।46।

छऽ अधिकार कर्म को तेरो
फल पर कोई हाथै न्हा।
कर्म फलन को हेतु नि हो तू
कर्म त्याग में लिप्त नि हो । 47।

योग युक्त हो कर कर्मन कैं
फलासक्ति छोड़ि धनंजयऽ!
सिद्धि असिद्धि प्राप्ति में सम हो,
यो समत्व ही योग कईं ।48।

कतर्म सबै अति तुच्छ कईनी
बुद्धियोग बिन कुरु नन्दन
अहो! बुद्धि की शरण ग्रहण कर
फल इच्छा धरि कृपण नि बण ।49।

भल नक पाप पुण्य द्वीनै है
बुद्धि युक्त यैं पार हुनी
यै वीलै तू यसो योग धर
योग सुकौशल कर्मन को ।50

कर्मन बै उत्पन्न फलन कैं
बुद्धि युक्त ज्ञानी तजनी
जन्म जनितबंधन है छुटनी
जय करि अभय अनामय पद ।51।

अब तेरो यो माह कलिल है
बुद्धि भली कै पार होली
आफी तुकैं वैराग्य हई जाल्

सुणी सुणण लायक है तब ।52।

श्रुति लै विचलित हइ बुद्धि तेरी
जब थिर और अचल हे जौ
अटल समाधि तबै है सकला
तबै योग त्वे प्राप्त होलो ।53।

अर्जुन बलाण
स्थितप्रज्ञ की के परिभाषा
केशव! उनरि समाधि के भै
कसिक बलानी कसिक बैठनी
कस आचरण उनोर हुँछ हो ।54।

श्री भगवान बलाण

जब संपूर्ण कामना छोड़ दीं
जो मन में उठनी छन पार्थ!
आत्मनिष्ठ जो आत्मतुष्ट हूँ
वी स्थितप्रज्ञ कई जाँछ ।55।

दुख में कुछ लै दुखी नि हुन मन
सुखै कभैं लालसा नि हुनि
क्रोध राग भय विगत हुँछऽ जो
वी मुनि ही स्थितप्रज्ञ कईं ।56।

शुभ या अशुभ प्राप्त हो जति कति
जो सर्वत्र छ स्नेह रहित
अभिनन्दन याद्वेष नि करनो
वी की बुद्धि प्रतिष्ठित छऽ ।57।

हाथ खुटन कैं जसी कै कछुवा
खैंचि ल्हीं आपणै आंड. भितर
इन्द्रिन कैं जो विषय बै खैंचौ
वी की बुद्धि प्रतिष्ठित छऽ ।58।

निराहार का विषय छुटण पर
भितरराग त छुटनै न्हा
यो रस राग तबै छुटलो जब
आत्मा दर्शन है जाला।59।

कौन्तेय! जो यत्नवान नर
इन्द्रिन कैं वश करणों चाँ
प्रबल और उद्धत यो इन्द्रिय,
खैंचि ल्हीनी वी का मन कैं। 60।

उन सबनै कैं संयम में धर
थिर कर चित्त मेरा आधार

जैका वश में छन सब इन्द्रिय
वी की बुद्धि प्रतिष्ठित छ।61।

जो नर कर चिन्तन विषयन को
है जालि विषयन में आसक्ति
यो आसक्ति उपै देलि इच्छा
इच्छा कारण उपजल क्रोध ।62।

क्रोध बै हूँ सम्मोह, और
सममोह करै दीं स्मृति विभ्रम
स्मृति विभ्रम लै बुद्धि नाश हूँ
सर्वनाश भै बुद्धि विनाश !63।

राग द्वेष है रहित हुणा पर
इन्द्रिय विषयन में विचरौ
आात्म प्रीति में ऊ निमग्न मन
आत्म प्रसाद प्राप्त करि ल्हीं ।64।

आत्म प्रसाद प्राप्ति लै है जाँ
सबै दुखन को पुर विनाश
सदा प्रसन्न चित्त रूणा पर
वी की बुद्धि सदा थिर रूँ ।65।

जो अयुक्त छऽ वीक बुद्धि न्हां
और भक्ति भावना लै न्हा
बिना भावना शान्ति नि मिलनी
शान्ति बिना काँ बै सुख हूँ ।66।

इन्द्रिन का भोगन का साथै
जै को मन लै लागियै रूँ,
वीकी बुद्धि हरण है जां जस्
वायु नाव को बाट हरि दीं ।67।

महाबाहु! अतएव जैकि छन
सब प्रकार वश में करिया
यों इन्द्रिय उनरा विषयन है
वी की बुद्धि प्रतिष्ठित छऽ।68।

जो छ रात सबै प्रणिन की
संयमि को वाँ जाग्रण हूँ
जतकै जागनी सबै जीव जन
मुनि वी कैं जै रात देखों! ।69।

सब ठौर भरपूर मर्याद वाला
समुद्र में जसि कै नदी अटानी
उसीकै कामादि जेमें बिलै जौ
वी शान्ति पालो न काम कामी।70।

पुरुष छोड़ौ जो सबै कामना
और सदा ऊ निस्पृह रूँ
बिन अभिमान बिना ममता हूँ
शान्ति प्राप्त वी करी सकौं।71।

पार्थ यसी यो ब्राह्मी स्थित छऽ
जै कैं पाई मोह नी हुन्
अन्त समय में लै जऽ तऽ
प्राप्त ब्रह्म निर्वाण हुँ छ।72

अमृत कलश कूर्माचली भगवद्गीता
तिसर अध्याय
कर्म योग

अर्जुन बलाण
तुमरे मत में जब कर्मन है बुद्धि श्रेष्ठ छऽ जनार्दनऽ
क्ये हूँ तब ये घोर कर्म में मकैं लगूँछा हो केशव! ।1।

दुविधा का इन वचनन कैं सुणि बुद्धि मोह में पड़ि जाणै
ऐकै बात बताओ जे लै निश्चय प्राप्त श्रेय है जौ ।2।

श्री भगवान बलाण
चली लोक में द्वि निष्ठा छन पैली मेरी कई निष्पाप!
ज्ञान योग छ सांख्य वालन को कर्म योग योगिन को छ ।3।

कर्मन को आरंभ नि करि क्वे पुरुष नि हुन निष्कर्म कभैं
या केवल सन्यास ल्हिणा लै सिद्धि प्राप्त नी इहे सकनी ।4।

कोई लै क्षा एस नी जानो बिना कर्म क्वे रै जाऔ
प्रकृति गुणन का कारएा परबस सबनै कर्म करण पड़नी ।5।

कर्मेन्द्रिय कँ रोकी द्यो, पर मन में करी विषय चिन्तन
यै भै विषय विमूढ़ चित्त सब, मिथ्याचार कई जरँ पै ।6।

मन का द्वारा जो इन्द्रिन कैं नियमित करि दीं छऽ अर्जुन!
कर्मेन्द्रिन लै कर्मयोग करि, अनासक्त ऊ श्रेष्ठ भयो ।7।

नित्य कर्म कैं करनै रौ निज भाल भै कर्म अकर्मन है
यो शरीर यात्रा ले तेरी हई नि सकनी अकर्मन लै ।8।

यज्ञ कर्म का सिवा और सब कर्म लोक हूँ बन्धन छन
वी की तैं कौन्तेय! कर्म तू करनै रौ आसक्ति रहित ।9।

यज्ञ साथ जब प्रजा रची तब कयो प्रजापति लै एसिकै
इन यज्ञन बै तुमरिवृद्धि हो, इष्ट कामना पूर्ण हुनऽ ।10!

देव भावना करी यज्ञ करि तुमर देवता भाव धरन
इनै परस्पर का भावनलेपरम श्रेय की प्राप्ति होली ।11।

अन्न धन, सन्तति सन्मति दिनी देवता यज्ञ बटी
उनरै दियो उनन नि दिन जो भोगनी ऊँ सब चोर छन ।12।

यज्ञ है बची अन्न जो खानी मुचित हुनी सब पापन बै
आपणै खाण् हूँ चुलि जो फुकनी ऊँ पापी त पाप खानी ।13।

अन्न बटी उपजीं सब प्राणी, अन्न उपज पर्जन्य बटी

समय में हूँ पर्जन्य यज्ञ लै, यज्ञ सिद्ध हूँ कर्म करी !14।

कर्म ब्रह्म बै हई समझ तू, ब्रह्म उदय भै अक्षर बै
सदा सर्वगत ब्रह्म यै वीलै, नित्य यज्ञ में बैठी भै ।15।

ये प्रकार यो चली यज्ञ कैं जो जनअघिल चलूने न्हा
छऽ इन्द्रिय लोलुप उ पापी, पार्थ! व्यर्थ ही ज्यून रयो। 16।

जै की रति मति छऽ आत्मा में आत्मा में जो मानव तृप्त
आत्मा में संतोष जैक छऽ वीक कती क्ये कामै न्हा ।17।

वीक प्रयोजन न्हाति कर्म में, उसै प्रयोजन हीन अकर्म
सब प्राणिन का साथ कती कैं, वीक कोई लै मतलब न्हा।18।

यै वीलै तू अनासक्त रौ करणी कम्र सदा ही कर
अनासक्त आचरणकरण पर पुरुष परम पद प्राप्त हुँ छऽ ।19।

यो ही विधि सब कर्म करण पर, जनक आदि लै सिद्ध भईं।
पुनः लोक हित कैं देखी लै करणी कर्मकरण चैनी ।20।

जस जस करनी श्रेष्ठ लोग सब, उस उस और लोग करनी
उनरै कर्म आचरण देखी लोक उसै अनुकरण करौं। 21।

न्हाति पार्थ! कर्तव्य कती कुछ तीनलोक में मेरी तैं
क्ये न्हा मेराप्राप्त करण हूँ, फिरिलै देख मैं कर्म करूँ ।22।

बिन आलस्य करण कर्मन को, अगर पार्थ में तयसाग करूँ
मेरो ही अनुकरण करण हूँ सबै मनुष्य उसै करला।23।

यदि मैं कर्म नी करूँ तो यो लाक समस्त भ्रष्ट हे जाल्
वएा संकरन कै पैद करूणी, प्रजा हनन करणी है जूल ।24।

जसि कै सब कर्मन कें करनी कर्म लिप्त अज्ञानी जन
उसी कैकरण चैंछ ज्ञानी लै कर्म लोक संग्रह की तैं।25।

बुद्धिभेद उपजूण नि चैनो ज्ञानिन लै अज्ञानिन में
उचित कर्म में लगै दिणो चैं, अपना योग आचरण लै।26।

प्रकृति करें सब गुण का कारण कर्म हुनीइकुछ आपण आफी
अहंकार माहित विमूढ़ पर समझि ल्हि छऽ मैं कर्ता छूँ ।27।

महाबाहु! पै तत्व समझणी, गुण कर्मन कँ अलग समझि
गुणैं कर्मन में रमण करणईं, यो जाणी आसक्त नि हुन।28।

प्रकृति गुणन लै मोहित जन जब, गुण कर्मन में लिप्त हुनी
ज्ञानी लै उन मूढ़ जनन कैं विचलित कभैं नि करणो चैन।29।

वासुदेव परमेश्वर में सब निज कर्मन को करि अर्पण।
आशा ममता रहित युद्ध कर मन में कोई ताप नि धर।30।

मेरो यो मत मानीइजो जन नित्य आचरण करना छन।
 दोष निदचे श्रद्धा धरि यै में, ऊँ लग बन्धन मुक्त हुनी।31।

शंका करनी अवगुण देखनी कभैं नि चलन मेरा मत में
 महामूढ़ ऊँ सब अविवेकी नष्ट हई छन समझि ल्हियै ।32।

प्रकृति गुणन वश बरबस चलनी क्ये ज्ञानी क्ये मूढ़ सदा।
 सबै जीव छन बँधी गुणन लै, को, के निग्रह की सकौं। 33।

 राग द्वेष लुकिया बैठी छन इन्दी औ विषयन का बीच
 इनरा वश में हुण नी चैनो श्रेय मार्ग का यो बटमार।34।

छऽ स्वधर्म गुण रहित श्रेयकर, सुखदायी पर धर्म हे बेर
मरण भला अपणा **स्वधर्म** में, पर परधर्म भयावह भै। 35।

अर्जुन बलाण
 कै को प्रेरित करी हुई जस् किलै पुरुष यो पाप करौं
 कृष्ण अनिच्छा हुण पर लै यो जबरन कै को भेजी हुई ।36।

श्री भगवान बलाण
यो छऽ काम, क्रोध लै यै छऽ, भे उत्पनन रजोगुण बै
 सबन खै दिणी बड़ पापी छऽ यै कैं ही तू बैरि समझ ।37।

धूँ ढकि दीं जसि के ज्वाला कैं धूल ढके जस दप्रण कैं
खुस्याल भितर जस बीज ढकी रूँ, उसै ढकी छऽसब यै लै।38।

सबै ज्ञान ढकियो छऽ यै ले, नित्य बैरिया ज्ञाता को
 काम रूप में कौन्तेय! यो, ज्वाला कभैं तृप्तनि हुनि।39।

 इन्द्रिय मन औ बुद्धि यैक छन अधिष्ठान बसणा का थान
इनन विमोहित करि यो ढकि दीं, सबै ज्ञान सब लोगन को।40।

 यै वीले तू सबन है पैली इन्द्रिय वश में करि अर्जुन!
 मार काम कैं, यो पापी छऽ ज्ञान ध्यान यै नाश करौं।41

स्थूल भूत है इन्दिय पर छन, इन्द्रिय है मन और परे
 मन है लै परे बुद्धि कई गे, और बुद्धि है परे छ ऊ ।42।

 जाणि वी कैं जो बुद्ध परे छऽ आत्मा लै आत्मा जय करि
 महा बाहु! तू मारी दे यो काम रूप दुर्जय रिपु कैं ।43।

अमृत कलश चौथ अध्याय
ज्ञान कर्मसन्यास योग

श्री भगवान बलाण–
मैंलै विवश्वान थें कौछी यो अविनाशी योग अघा
विवश्वान लै सिखा यो मनु कैं मनुल कौछ् इश्वाकु थें यो

यै प्रकार यो परंपरा बट, राजर्षिन लै यसेग जाणो
भौत काल बित, वी योगऽ को लोप हई गो अब अर्जुन ।2।

आब मैं फिर वी पुराण योग कैं तुकैं बतैं दी यै वीलै
तू मेंरो प्रिय सखा भक्त छै, सब रहस्य है उत्तम यो ।3।

अर्जुन बलाण
अब को छऽ यो जन्म तुम्हारो विवश्वान ऊँ–कब का भै
यो धैं कसिकै समझी जालो, तुमुल आदि मंयोगसिखै ।4।

श्री भगवान बलाण
बहुतै जन्म बाति गईं मेरा, औ तेरा लै, हे अर्जुन
मकैं याद छऽ उन सबनै की, तुकैं याद न्हे कुन्ती नन्दन।5।

अज अविनाशी आत्मा छूँ मैंए सब प्राणिन को ईश्वर छूँ
एस हुण पर लै स्वयं प्रकृति कैं ग्रहण करी मैं जन्म ल्हिछूँ ।6।

जब जब धर्मग्लानि है जैं छऽ और अधर्म बड़ौं भारत!
तब तब धर्मविकास करण हूँ, आफी मैं अवतार ल्हि छूँ ।7।

साधुन को उद्धार करण हूँ औ विनाश करि पापन को
ध्र्म थापना करणैं की तैं फिरि युग युग में मैं प्रकट हूँछूँ ।8।

दिव्य जन्म कर्मन का मेरा जो जन तत्व समझि जानी
देह त्याग करणा पर फिरि ऊँ, कभैं जन्म नी ल्हिन अर्जुन ।9।

वीतराग, भय रहित क्रोध बिन, मैं मय मेरी शरण हई।
ज्ञान तपस्या लै पवित्र जन म्यारै भाव अई गयीं ।10।

जो जसिकै भजनो छऽ मैं कन, मैं लै वी कैं उसै भजूँ
कसिकै हो, सब मेरी तरफ हूँ, पुरुषअई जानी अर्जुन।11।

फल की अभिलाषा करि बेरै, जो पुजनी उन द्याप्तन कैं
यै मनुष्य लोकै में जल्दी सिद्धि मिलैं उन कर्मन की ।12।

गुण कर्मन का भेद मुताबिक म्यारै रची छन चारों वर्ण
कर्ता हुण पर लै मैं उनरो, कत्र न्हातूँ अव्यय छूँ।13।

मकैं कर्म को लेप नि हुन कुछ फल की मैं के तृष्णा न्हा
ऐसो मैं कन जो समझौ वी लग कर्म लेप नि हुन।14।

ऐस्सै जाणी सब साधक लै कर्म सदा वै करन रईं
यै वीले कमै। कर तू लै, परंपरा बै चली आई ।15।

क्ये छऽ कर्म? अकर्म क्ये भयो? भाल् भाल् लै यै समझि नि पै
मैं समझै द्यूँलो, समझी तू अशुभ बै मुंचित हई जाले।16।

कर्म समझ ल्हिण चैनी तब फिर, समझण चैनी क्ये भै विकर्म?
फिर अकर्मसमझण चैं भलिकै, अत्ती गहन कर्म गति छऽ ।17।

कर्मन में देखी अकर्म जो, औ अकर्म में कर्मन कैं।
वी विद्वान मनुष्यन में छऽ, वीकै कर्म कृतार्थ भईं।18।

जैका सब उद्योग सदा ही, फल इच्छा हेरहित हुनी।
ज्ञान अग्नि में भस्म कर्म सब, **बुध** वी थैं पंडित कूनी।19।
कर्म फलै आसक्ति त्याग करि, आश्रय छोड़ि, संतुष्ट सदा।
कर्मन करनै रूणा पर लै, कत्ती कैं क्ये करने न्हा।20।

आशा रहित, चित्त आत्मा वश, सबै परिग्रह छाड़ी हुई
सिर्फ देह का कर्म करण पर ऊ पापन कै प्राप्त नि हुन।21।

जो मिलि जाँ संतुष्ट छ वी में,द्वन्द्व रहित औ मत्सर हीन
सिद्धि असिद्धि एकनसी जै छऽ कर्म करण पर लिप्त नि हुन।23।

संग रहित जो मुक्त पुरुष छ, ज्ञानै में थिर चित जै को
यज्ञन कैकरणै रूणा पर, कर्म समग्र विलीन हुनी ।24।

ब्रह्म छ अर्पण ओर ब्रह्म हवि ब्रह्उ अग्नि औ आहुति ब्रह्म
सब प्रकार ऊँ हई ब्रह्ममय, ब्रह्म कर्म छ, ब्रह्म समाधि।24।

यज्ञ अनेकन देवन का हित विधि लेकरनी योगी जन
एक यज्ञ छ ब्रह्म अग्नि में, यज्ञान को करि दीनी हवन।25।

कान आदि इन्द्रिन को कोई संयमाग्नि में करनी होम!
शब्द आदि विषयन को कोई इन्द्री आग में करनी होम।26।

सब इन्द्रिय का कर्मन साथै, प्राण कर्म कैं लै कऽे जणि
आत्मरोध की योग अग्नि में होमनी ज्ञान प्रज्वलित करि।27।

द्रव्य यज्ञ क्वे, तपो यज्ञ क्वे, योग यज्ञ करनी क्वे क्वे
ज्ञान यज्ञ स्वाध्याय सहित क्वे, करनी यति जन कठिन व्रती।28।

क्वे अपान में प्राण होम दिनी, प्रणन बीच अपान कोई
प्राण अपान चलण रोकि दीनी, प्राणयाम प्रवीण कोई ।29।

क्वे आहार छीण करि करनी प्राणन मं प्राणन को होम
सब प्रकार यज्ञन कैं जाणणी, यज्ञै करनीइपाप विनाश।30।

यज्ञ प्रसाद अमृत का भोजी, पुजनी ब्रह्म सनातन में।
यज्ञहीन को योई लोक न्हा, परलोकै की बात क्ये भै।31।

यै प्रकार विस्तार पार नै उदित वेद ब्रह्मा मुख बै
कर्म करी सम्पनन हुनी सब यो जाणी तू मुक्त होलै।32।

सबै द्रव्यमय यज्ञन हैं छऽ उत्तम ज्ञान यज्ञ अर्जुन!
सबै तरफ बै कुल कर्मन की, पार्थ! ज्ञान में हुँ छऽ समाप्ति।33

विनय प्रणाम और सेवा करि सिख वी ज्ञान प्रश्न करि करि।
ज्ञानी गुरु आचार्य तत्वविद् तुकैं सिखै देला ऊ ज्ञान। ।34।

जै कर जाणी पुनः कभैं लै, यसो मोह नि हो अर्जुन!
तब अशेष प्रणिन कैं देखलै आपणि आत्मा में,मैं में ।35।

यदि तू घोर घोर पापिन मे महा घोरतम पापी हो।
तब लै ज्ञान रूप नैया ल्ही, पाप समुद्र तरी जालै।36।

जसिक प्रज्वलित अग्नि काठ कैं, भस्मसातकरि दीं अर्जुन
ज्ञान अग्नि सब्बै कर्मन कैं भसम करी दीं छऽ उसिकै।37।

ज्ञान समान कती क्ये न्हाती पावन किरणी यै जग में
योग सिद्धि का समय स्वयं ही अनुभव है जाँ रग रग में।38।

वश करि इद्रिन, साधन तत्पर, श्रद्धावान कै ज्ञान मिलौं
ज्ञान प्राप्त करि परम शान्ति लै, वीको वी क्षण कमल खिलौं।39।

श्रद्धा रहित और अविवेकी संशय ग्रसित त् नष्ट हुँ छऽ
संशय ग्रसित न सुख पै सकनो, द्वियै लोक है भ्रष्ट हुँ छऽ ।40।

योग में करि अर्पण कर्मन को काटौ ज्ञान लै सब संशय।
आत्मवन्त को कोई कर्म तब, बन्धन नी हुन धनंजयऽ ।41।

यै वीलै अज्ञान बै उपजी, बैठी हृदय में जो उद्धत!
ज्ञान खड्ग ल्ही काट्ि ऊ संशय, बैठ योग में उठ भारत! 42।

अमृत कलश कुमाऊनी भगवद्गीता
पचूँ अध्याय
कर्म सन्यास योग

अर्जुन बलाण
कृष्ण! कती सन्यास कर्मको कैं फिर योग बतूँछा भल।
इन द्वीनै में एक बताओ, जैल श्रेय हूँ निश्चय भल ।1।

श्री भगवान बलाण
ल्हे सन्यास या योग कर्म कर, द्वियै छन परमार्थ दिणी
किन्तु कर्म सन्यास है जाणियै कर्मयोग सविशेष भयो।2।

समझौ वी छ नित्य सन्यासी करौ न द्वेष न आकांक्षा
महाबाहु! निर्द्वन्द्व रूँछ जो सहजै बन्धन मुक्त है जा छँऽ।3।
सांख्य योग में भेद बतूणी, बालक छन पंडित नी भै।
कोइ एक में थिर हो भलिकै दुहरो फल वी आफी मिलि जाँ ।4।

जो पद प्राप्त हूँ सन्यासी कैं वी योगी कैं मिलि जाँ छऽ
एकनससे सान्यास योग जो देखनो छऽ वी देखनो छऽ ।5।

महाबाहु! सुण योग बिना तऽ, सन्यासी हुण बड़ै कठिन
योगयुक्त मुनि बहुतै जल्दी, ब्रह्म पूर्ण पद प्राप्त हुँ ऽ ।6।

योगयुक्त ऊ पावन आत्मा, आत्माजयी जितेन्द्रिय हूँ
सब प्रणिन में व्यापक आत्मा, कर्म करण पर लिप्त नि हुन।7

मैं कुछ लै करनै न्हातूँ यो समझो योग तत्वज्ञानी
देखनै, सुणनै, छ्वीणै सुंड•णै, खै हिटि सिणपड़ि श्वास ल्हिनै ।8।

ल्हिनै दिनै औ हसन बलाणै, पकड़ि छोड़ि आँख टमकूणै।
यो समझन छ यो इन्द्रियगण निज निज काम में लागिया छन।9।

ब्रह्म में अर्पण करि कर्मन कैं, करी कर्म आसक्ति रहित
कभैं पाप में लिप्त नि हुन उ, पाणि में कमल पात जसिन्यात10।

केवल बुद्धि और मनन तन लै, अथवा केवल इन्द्रिन लै
सदा कर्मकरनी योगी जन, आत्म शुद्धि करि संग छोड़ी ।11।

योगी फल आसक्ति त्याग करि, परम शान्ति कै प्राप्त करौं
इच्छा कारण फलासक्त जन, याग बिना बाँधियै रूनी।12।

मनसा द्वारा सब कर्मन को करि सन्यास ऊ सुखी जयी
नौ द्वारन वाल पुर में देही, कुछ लै करन करूनो न्हा।13।

न त् कर्ता कैं औ न कर्म कैं, लोकन को प्रभु रचनै छऽ
ओर न फल संयोग कर्म को गुण स्वभाव यै करनो छऽ ।14।

विभु कै को क्ये पाप नि ल्हीनो औ न कै क्वे पुण्य ल्हिनो
यो अज्ञान लै ज्ञान ढकी छऽ यै लै प्राणी मोहित छन।15।

क्वाठ को सब अज्ञान फाटी जाँ रात ब्याण जसि मति कैं
ज्ञान दिवाकर जसै उदय हूँ चमकै धरौं परात्पर कैं।16।

वी में बुद्धि आत्मा वी में निष्ठा वीकि परायण वीक
आवागमन उनर मिटि जाँ सब ज्ञान, दोष कल्मष हरि दीं। 17।

विद्या विनयवान ब्राह्मण औ, गोरु हाथी कुकुरो चांडाल
सबनै आत्म स्वरूप समझनी पंडित समदर्शी हूनी।18।

ज्यूनै जन्म जगत जितियै छऽ सम स्वरूप जनरो छऽ मन
दोष उरहित समब्रह्म में निश्चल, परमब्रह्म में वी थिर छन।19।

सुखद मिलण पर हर्ष नि हुन क्ये, अप्रिय में उद्वेग नि हुन
संशय रहित बुद्धि थिर वी की, जाणौ ब्रह्म वी ब्रह्म भयो।20!

बाह्य विषय आसक्ति हीन छऽ अन्तर में ही जै सुख छऽ
ब्रह्म विदित वी योगी कैं छऽ अक्षय सुख वी प्राप्त हुँ छऽ ।21।

स्पर्श जनित जो विषय भोग छन सब्बै दुःख योनि जन ऊँ
हे कौन्तेय! ऊँ आदि अन्त वाल्, रमण उनन में बुध नि करन।22।

इन्द्रिनजिती समथ्र सह सकौं देह छुटण है पैलिक जो
काम क्रोध उत्पन्न वेग कैं, योगी वी छ् सुखी वी नर।23।

अन्तर में ही सुखाराम छऽ, अन्तर में ही जोत जागी
वी योगी निर्वाण प्राप्त छऽ ब्रह्म में लीन हई वी छऽ ।24।

ऊँ सब परमेश्वर स्वरूप छन ऋषिगण क्षीण हई छन पाप
द्वन्द्व विमुक्त जितेन्द्रिय छन जो, सब प्रणिन का हित में रत।25।

काम क्रोध बै मुक्त हई छन यती जनन का वश में मन
सबै तरफ बै घन विदितात्मन, अनायास ऊँ ज्ञानी छन। 26।

भैरा विषयन कैं करि भैरै, नेत्रन कैं करि भृकुटि भितर।
प्राण अपान समान करी द्यो नाक भितर जो चलनी स्वर।27।

इन्द्रिय मन औ बुद्धि वश करी मुनि जो मोक्ष परायण छऽ।
इच्छा भय औ क्रोध गया जाँ, मुक्त सदा हूँ तत्क्षण छऽ ।28।

यज्ञ तपस्या को भोक्ता छूँ, मैं ही विश्व महेश्वर छूँ
शान्ति प्राप्त हूँ यो जाणी, मैं, सब प्राणिन को प्रियवर छू!।29

अमृत कलश कुमाउनी भगवद्गीता
छठुँ अध्याय
आत्म संयम योग

श्री भगवान बलाण–
बिन अवलंबन कर्म फलन का, करणी कर्मन करनै रूँ।
वी सन्यासी वी योगी छऽ, अग्नि रहित अक्रिय क्ये न्हा ।1।

जै कँ भल सयास कई जाँ, वी तू योग समझ अर्जुन।
बिना करी संकल्प त्याग सब, क्वे लै योगी है नि सकन।2।

योग में जो आरूढ़ हुणों चाँ वी को कारण कर्म बतई जाँ
योग जब आरूढत्र हई जाँ, वी को कारण शमन बतई जाँ ।3।

न त इन्द्रिन का विषयन में ही, और न कर्मन में आसक्ति
सब संकल्पन को सन्यासी ही, योगारूढ़ कई जालो।4।

आत्मोद्धार हूँ आत्मा ही लै, आत्म नाश लै आत्मा लै
आत्म बन्धु लै आत्मा ही छऽ आत्मा ही रिपु आत्मा को।5।

बन्धु आत्मा उनरै जनुलै आत्मा लै जिति ल्ही आत्मा
अविजित आत्मा छऽ अनात्म रिपु बैरि बणी वी की आत्मा। 6।

हूँ प्रशान्त मनआत्माजित को, परमात्मामय, सम है जाँ
ठंड गरम में औ सुख दुख में, मान और अपमान में लै।7।

अनुभव ज्ञान ले आत्मतृप्त छऽ, जड़ में पुजी जितेन्द्रिय छऽ युक्त कई जाँ
वी योगी कैं, सुन माट जै हूँ एकनस्सै। 8।

सुहृद, मित्र, अरि, उदासीन में, बीचा, बन्धु औ द्वेषी में।
साधुन है औ पापिन है लै, ऊ समबुद्धि विशेष भयो ।9।

योगी सदा योग में जुटि जौ, कै एकान्त जगा में बैठि
एकलै रो वश करी चित्त मन, परिग्रह और वासना त्यागि।10!

शुद्ध भूमि में अपनो आसन, स्थिरता की तैं करि थापन।
मुणि बै कुश, मृगचर्म, माथि वसन अति उच अति निच नी हुन।11।

योगासन में बैठण चैं तब शान्त चित्त अक्रिय इन्द्रिय।
तब वाँ मन एकाग्र करण चैं, अन्तःकरण करण हूँ शुद्ध।12।

सीधो करि काया, गरदन, शिर, अचल और थिर आपूँ कैं धरि।
देखौ आपणै नाका टुक में एथकै उथकै दिशा नि चै।13।

शान्त स्वरूप भय रहित बैठी, ब्रह्मचर्य व्रत धारण करि ।
वश में मन हो चित्त लागी हो, मेरी ओर थिर मत्पर हो।14।

यै विधि योग में सदा लागी रौ, मन चित भलिक निरोध करौ।
परम शान्ति निर्वाण प्राप्त करि मेरी स्थिति में ऐ जालो।15।

योग यो अत्ती खै लै नी हुन, औरन पअ भुख रूणा लै
वीक लै नै जो सिणै पड़ी रौ, या जो जागियै रौ अर्जुन।16।

हो आहार विहार सु नियमित, समुचित चेष्टा समुचित कर्म।
नियमित निद्रा नियमित जाग्रण , तबै योग दुख नाशक हूँ।17!

ऐसिकै संयत करी हुई मन, आत्मा में एकाग्र हुँ छऽ।
भोग लालसा रहित हुई तब, योग युक्त ऊ कई जाँ छऽ।18।

जस प्रधान दी तौलि भितर बै एक तार एकसार जगों
यै उपमा योगी का मन की लागी ध्याान बै हलकन न्हा।19।

योगाचरण करदा पर जब जै, उपरत चितत निरुद्ध हुँ छऽ
तक आत्मा ले देखी आत्मा, आत्मा में आनन्द हुँ छऽ ।20

इन्द्रिय सुख है अणकस्सै वी उत्तम सुख्स कैं बुद्धि उठूँ।
जै कैं अनुभव करी तत्व बै फिरि ऊ विचलित है नि सकन।21।

परम लाभ ऊ मिलणा पर फिरि अधिक लाभ कवे लागनै न्हा
तब फिरि कस्सै दुख पड़ी जा यागी विचलित है नि सकन। 22।

दुःखन का संयोग बटी जब, हो वियोग वी यो समझ।
निश्चय वी मेंयुक्म हुणो चैं, उत्साहित ततपर चित लै।23!

उठनी जो संकल्प बै इच्छा, सब छसेड दे, क्वे शेष नि धर।
मन द्वारा इन्द्रिय समूह को, सब प्रकार लै नियमन कर।24।

माइॅ माठू उपराम विरति लै? बुद्धि धारणा ग्रहण करौ।
मन आत्मा कैं ध्यान लीन करि, तब लै कुछ चिन्तन नी करौ।25।

जस जस यो चंचल अस्थिर मन विषय भावना में विचरौ।
तस तस फिरि लौटे मन कैं, आत्मावश करि मौन धरौ।26।

सब विधि जब प्रशान्त मन है जाँ, उत्तम सुख योगी कैं हूँ।
रहित रजोगुण है जाँ तब ऊ पावन ब्रह्म रूप में रूँ।27।

यै विधि पाप रहित ऊ योगी, नित्य आत्मा में जुड़ि रूँ
ब्रह्मानन्द निमग्न हुणा को, आत्यंतिक सुख अनुभव हूँ।28।

सब प्राणिन में निज अरात्मा कैं, आत्मा में सब प्राणिन कें

योग युक्त आत्मा देखनै रूँ, सबै ठौर समदर्शन हूँ।29।

जो मैं कन सर्वत्र देखि सकौं, मै में देखि ल्हरं सर्वात्मन।
मैं परोक्ष वीकि तैं न्हातूँ ऊ परोक्ष न मेरा हुन् ।30।

सब प्राणिन में मेरा दर्शन एकीभूत भजौ मैं कन।
सब जोग सब प्रकार वर्तण पर, मैं में रूँ बिन परिवर्तन। 31।

आपणी आत्मा का समान जा छऽ सर्वत्र हूँ सम दर्शनं
सुख में हो, अथवा हो दुख में, वी उत्तम योगी अर्जुन।32।

अर्जुन बलाण
तुमलै मैंकन समदर्शन को, योग बता जो मधुसूदन!
मैं स्थिति कैं सम्भव नी देखन्यू मन की चंचल गति कारण।33।

कृष्ण महा चंचल यो मन छऽ अती बली इन्द्रिन मथणी।
यै को वश करणो मैं समझूँ। बयाल् रोकण जस दुष्कर छऽ ।34।

श्री भगवान बलाण
महाबाहु! यै में के संशय, मन दुर्निग्रह चंचल छऽ
चिर अभ्यास औ दृढ़ विराग लै पर यो वश में करी सकीं।35।

मन संयम का बिना यागे हुण छऽ अशक्य मेरा मत में।
मन वश धरी प्रयत्नशील को, पै है सकौं उपाय करी।36।

अर्जुन बलाण
श्रद्धा हो पर यत्न भल नि हो, योग में चंचल रति मति हो।
योगसिद्धि यदि प्राप्त नि हो तऽ कृष्ण! उनरि तब क्ये गति हो? ।37।

क्ये ऊँ उभय भ्रष्ट है जाला, छिनन मेश जा नष्ट होला?
महाबाहु! जो मन भटकण पर, भया योग पथ बै विचलित।38।

कृष्ण मेरा यो सब संशय छन, तुमैं इनन कैं दूर करौ।
दुसर ओर को मिलल तुमन है, भलिक जो संशय जाल हरौ।39।

श्री भगवान बलाण
वीको पार्थ! विनाश न्हांति कैं, यै लोकै या पर लोकै।
नी हुनि वीकी दुर्गति भैया! जो कल्याण करएा में हो।40।

स्वर्ग लोक कैं प्राप्त करी, वाँ वर्षअनेक निवास करी।
पुण्यवान श्री भरी गेह में, योग भ्रष्ट ऊँ छ उतरी।41।

अथवा बुद्धिमान योगिन का कुल में आई जन्म ल्हिनी।
ऐसो जन्म जगत में दुर्लभ औरन कैं ऊ कां मिलनी।42।

है जां पूव। जन्म का कारण, बुद्धि योग में मन बन्धन।
पुनः यत्न करणा पर सहजै सिद्धि हई जाँ कुरुनन्दन!43।

अपना योगाभ्यास हूँ खैंची ऊँछ् भोग बै विवश हई।
योगै जिज्ञासा हुण पर लै, शब्द ब्रह्म का पार पुजौं।44।

यत्न करण पर ही योगी का करने शुद्ध पाप मति कैं।
कई जन्म उपरांत सिद्धि हूँ, तब पै ल्हिनी परा गति कैं। 45।

अधिक तपस्वी है छऽ योगी, ज्ञानी है लै ठुल योगी।
कर्मी है लै अधिक छ् योगी अर्जुन! तू लै हो योगी।46।

सब योगिन में जै योगी की अन्तर आत्मा मद्गत छऽ
श्रद्धावान भजन कर मेरो, वी उत्तम मेरो मत छ।47।

अमृत कलश सतूँ अध्याय।
ज्ञान विज्ञान योग

श्री भगवान बलाण–

मैं में कर आसक्त पार्थ ! मन योग में जुड़ मेरा आश्रय
संशयहीन जसिक तू मैं कन, परमपूर समझलै, सुण ।1।

ज्ञान और विज्ञान सहित, मैं तुकें समस्त सिखाई दीं
जैकन जाणी जाणण तैं तब, कती और के बांकि नी रून।2।

नर हजार में बाज्जै कोई, सिद्ध हुणैं तैं यत्न करों।
यत्नवान सिद्धन में कोई, मकैं जाणि सकौं तत्व सहित।3।

पृथ्वी पाणी अग्नि वायु नभ, यों तन्मात्रा औ मन बुद्धि। अहंकार वस यै विधि मेरी
पगकृति भिन्न छ आठ प्रकार।4।

प्रकृति अशुद्धा यो अपरा भै, दुसरि शुद्ध ऊ परा कईं
महाबाहु! यो जीव रूप छऽ, यै कँ धारण करीं जगत् ।5।

द्वीयै प्रकृति यो भूत यानि छन जीव मात्र कैं जन्म दिणी
समझ एसिक मैं अखिल जगत को आदिरूप औ अन्त स्वरूप।6।

अहो धनंजय मेरा परतर, कत्ती कैं के छुटियै न्हा!
यो सब मैं में गछी हुई छ धाग में मणिमोत्यूँ रसन्यात।7।

जल को रस छूँ कौन्तेय! मैं, प्रभा सूर्य्र शशि की छू! मैं।ओंकार वेदन को दू! में,
नभ में रव पौरुष नर में।8।

पुण्य गंध पृथ्वी की छूँ मैं, ज्वाला तेज विभवसु की
सब प्रणिन को जीवन छूँ मैं, तप छूँ तथा तपस्विन को ।9

जीव जगत को आदि बीज मैं जाणले पार्थ! सनातन छूँ।
बुद्धिमान की बुद्धि लै मैं छूँ, जेजस्विन को तेज लै मैं ।10।

बलवानन को बल मैं ही छूँ, काम राग है रहित हई।
सम्मत धर्म अखिल प्राहिणन को, काम लै मैं ही छूँ अर्जुन11।

और ले जो यो सात्विक राजस तामस भाव उदय हूनी
मैं बट हई समझ, मैं में छन, किन्तु उनन में मैं न्हातूँ ।12।

इनै तीन गुणमय भावन लै जगत यो सारो विमोहित छऽ
यै वीलै ऊँ मकैं नि समझन पर छूँ निर्गुण अव्यय मैं ।13।

दैवी ऐसी त्रिगुणमयी यो दुस्तर मेरी महामाया!
मैं मायापति कैं जो भजनी, वी माया कैं तरि सकनी।14!

रत कुकर्म में मूढ़ नराधम, मेरी शरण में नी ऊना।
ज्ञान हरी माया में अतरी, भाव आसुरी भरी हुई।15।

चार तरह मैं कन भजना छन, पुण्यात्मन जन हे अर्जुन!
आर्त, जिज्ञासी औ अर्थार्थी, चौथे ज्ञानी, भारत श्रेष्ठ ।16।

इनन में ज्ञानी नित्ययुक्त छऽ एका भक्ति विशेष हुँ छऽ
अतिशय प्रिय हूँ मैं ज्ञानी कैं, ज्ञानी मैं कैं अति प्रिय छ।17।

सब उदार यों भक्त चार पै, ज्ञानी मेरो स्वरूप भयो।
मैं जो सबनै उत्तम गति छूँ ऊ मैं कन ल्ही बैठी छ।18।

बहुत जन्म का अन्त हुणा पर, ज्ञानी मैं कन जाणि सकौं
जे छऽ यो सब वासुदेव छऽ जाणौ महात्मा दुर्लभ छ।19!

काम मोह लै ज्ञान हरी जाँ, अन्य देवता उपासना,
जस संस्कार नियम भै उनरा, तसै उनर आराधन हूँ।20।

जै जै भजनी ऊँ जसिकै, श्रद्धा करि जे इच्छा करि।
वी वी की उसि उसि श्रद्धा कैं, अचल करूँ मैं सर्वोपरि।21।

मेरी दृढ़ करी श्रद्धा कारण आपण आपण इष्टन भजनी
मेरा ही निर्धारित करिया, अभिलाषा फल प्राप्त हुनी।22।

अल्प बुद्धि लोगन का यों फल नाशवान छन यै वीलै
देव उपासक देवन पुजनी मेरे भक्त मिलनी मैं में।23

अप्रकट मैं व्यक्ति हई छूँ हीन बुद्धि ऐतुकै जाणनी नी जाणना
पर परम भाव कैं मैं अति उत्तम अव्यय छू! ।24।

मैं प्रकाश में सबन हूँ न्हातूँ ढकी योग माया लै छूँ
मूढ़ लोग पै यो नि जाणना छ अज अव्यय मेरो स्वरूप ।25।

जाणू सबन कै जो अतीत भै, वर्तमान छन जो अर्जुन!
जे भविष्य में होला प्राणी, किन्तु मकैं क्वे नि जाणना।26

इच्छा द्वेष में उदय हुणी, द्वन्द्वन में मोहित भारत
अहो परंतप प्राणि मात्र सब, भ्रम में पड़ी भ्रमण करनी।27।

जनरा पाप समाप्त हई छन, पुण्यवान जो सृकृती जन।
द्वन्द्व मोह बटि छुटी हुई मन, दृढ ब्रत करि भजनी मैं कन।28

जरा मरण बै मुक्त हई तैं, मेरी शरण यत्न करनी
अखिल ब्रह्म, अध्यात्म सबै औ सकलकर्म कैं जाणि ल्हिनी।29

जो अधिभूत और अधि दैव कैं, फिर अधि यज्ञ मकैं जाणनी।
बुद्धियुक्त ऊ अन्त समय लै, मैं कन यथायोग्य भजनी।30

अमृतकलश अठूँ अध्याय –
अक्षर ब्रह्मयोग

अर्जुन बलाण
हे पुरुषांत्तम! ब्रह्म के भयो? क्ये अध्यात्म कर्म क्ये भै?
को अधिभूत बताओ कस हुँछ को अधिभूत कई जाँ छऽ

मधुसूदन !यै देह मध्य में, क्ये अधियज्ञ कसो हुँछ हो
अन्त समय में मन संयम करि, कसिक जाणण में ऊँद्वा तुम। 2

श्री भगवान बलाण
ब्रह्म परम अक्षर छऽ, वी कै जो स्वभाव अध्यात्म कईं
नम रूप उत्पन्न करि दिणी, ग्रहण विसर्जन कर्म कईं ।3।

नशवान अधिभूत कईं छऽ जीव पुरुष अधिदैवत छऽ
मैं अधियज्ञ सबन को अधिपति, देहवान में देही वर।4।

अन्त समय में जो मेरो ही स्मरण करी छोड़ी दीं देह
यैमें क्ये सन्देह न्हाति ऊ मेरा भाव में पुजि जालों ।5

स्मरण करौ जो जस भाव कैं छोड़ि दिं अन्त कलेवर कैं।
भावित है जाँ कौन्तेय! वैं प्राप्त करी ल्हीं वी वीकैं।6

ये वीलै सब काल सर्वथा मैं कन भज तू कर संग्राम
अर्पित करि मन बुद्धि मकैं तू, निश्चय आलै मेरा धाम।7।

योगाभ्यास में लागी रई रूँ चित्त जैक कैं कती नि जान
दिव्य पुरुष कैं पुजि जाला ऊ, पाथ्र नित्य जो कर चिन्तन।8

अनादि सर्वज्ञ ठुल है ठुलो जो, अणु है मसिण रूप अचिन्तयनीय
रवि है उज्योल रं अन्यार है परे ऊ धाताा नियन्ता कैं ऊ भजन्छ। 9

जाण बखत ऊ मन कै अचल कै स्वभक्ति लै योगबल कैं लगाई
प्राणन कैं खैंची भैं बीच ल्यूनी ऊ! दिव्य विभु कैं पाई ल्हिनी हो।10

वेदज्ञा ज्ञानीइजे अक्षर बतूनी, जै में यती वीतरागी समानी
इच्छा हूँ जेकी रै ब्रह्मचारी वी तमद मुणी में मैं त्वे बतूँछू! 11।

सब इन्द्रिन का द्वार बन्द करि, मन को हृदय निरोण करी
प्राणन कैं मस्तक हूँ खैंची मेरा ध्यान योगी बैठौ।12।

ओम् एक अक्षर उच्चारएा, चिन्तन करौ योग धारण
ऐसिकै जो तजनी अपनो तन, उततम गति पूनी ऊँ जन।13।

जो अनन्य भाव ले सबदिन सबै बखत कर मेरो भजन

उनरी तैं मैं पाप्रि सुलभ छूँ, नित्ययुक्त ऊँ योगी छन।14।

परम सिद्धि कैं पुजी महात्मन, म्ें कन पुजी हुई जो छन।
दुक्खी घर जाँ बार बार मर, पुनर्जन्म ुरि उनर निहुन।15

चौद भुवन मय ब्रह्म लोक का सबछन जन्म ल्हिणी अर्जुन!
मैं कन पाई कोन्तेय! पे पुनर्जन्म कभैं नि हुन।16!

एक हजार चतुर्युग को दिन, उसै हजार युगन की रात
ब्रह्मा का दिन रात पछाणनी महा काल ज्ञानी ऊँ छन ।17।

ब्रह्मा का दिन में अव्यक्त बै नाम रूप ाब जन्म ल्हिनी
रात्रि ऊण पर ुरि अव्यक्त में वीं सब प्रलय हइ जानी।18

ऐसिक भूत प्राणी दिनदरातन उदय हुनी औ अस्त हुनी
रात भई त विवश शे गया दिन में पार्थ! विवश जागनी।19

यै उदय अस्त है पार एक अणकस्सै भाव सनातन छऽ
जब सब नाश हुणी प्राणिन का बीच कभैं ले नष्ट नि हुन।20

वी अव्यक्त थें अक्षर कूनी, वीकै नाम परम गति छऽ
वीपाई फिरि कभैं नि लौटन परम धाम ऊ मेरो छ। 21।

परम पुरुष ऊ पाथ्र! भक्ति लै, पई सकीं अनन्य हई।
जैक भितरयो सब भूत छन, जो सब कैं परिपूर्ण छई।22।

एक काल जै लौटन न्हातन, ओर दुसर जेलौटि जानी
योगी जन का मरण काल द्वी, भरत श्रेष्ठ! मैं बतुणयूँ !23।

अग्नि ज्योति औ शुक्ल पक्ष हो, म्हैण उत्तरायण को छै।
यै बाट जाणी ब्रह!म है जानी पहुँची हुई ब्रह्मज्ञानी।24।

धुवाँ राज औ कृष्ण पक्ष हो, म्हेण दक्षिणायण का छै
चन्द्र ज्योति पथ बै जो जानी, ऊँ योगी फिरि लौटि जानी।25

पाथ्र योइ द्वि बाटन पछाणी, यागी मोह में नि पड़नो।
यै वीलै तू सबै काल याँ योग युक्त है रौ अर्जुन।26।

शुक्ल कुष्ण याँ द्वीयै गति छन, जग में चली सनातन बै।
एक मार्ग बट लौटन न्हातन दुसर बटी जै लौटि जानी।27।

वेदाध्ययनको औ यज्ञ तपको दानादि पुण्यन का जो फल बतूनी।
यो ज्ञान पाई सबन कैं पछै दीं अधिन सबन हे योगी पुजी जौं 28

अमृत कलश नवूँ अध्याय।
राजविद्या राजगुह्य योग

श्री भगवान बलाण
गोपनीय अति, तुकैं सुणूँ यो, दोष देखणिया न्हातै, तब।
अनुभव सहित ज्ञान यो जाणी मुचित होलै पापन है सब।1।

अति पवित्र अति उत्तम विद्या, गुप्त राज द बड़ो महान
धर्मयुक्त, प्रत्यक्ष फल दिणी करण सहजै पै अविनाशी ।2।

न्हाति परंतप! जन पुरुषन की श्रद्धा चढ़ी धर्म रथ में
मकैं नि पै ऊँ घुमनै रूनी यै संसार मृत्यु पथ में ।3।

सारे जगत में मैं भरियो छूँ! निज अव्यक्त मूर्ति द्वारा।
मैंमें अटकी छन सब प्राणी पर मैं वाँ कैं ज्ञिथत न्हाँतूँ ।4।

चमत्कार देख मेरो योग को मैं में स्थित लै कैकी न्हाँ।
धारण पोषण करि असंग रूँ यद्यपि मैं उत्पन्न करूँ ।5।

जस अकाश में महावायु यो सब जाग छऽ औ सब जाग जा
उस यो अखिल भूत प्राणी लै मैंमें स्थित छनँ,ऐसो समझ ।6।

कौन्तेय! कल्पान्त समय सब मेरी प्रकृति में लीन हुनी।
कल्प आदि मेंउनैं सबन्को मैं ही फिर सेसृजन करूँ ।7।

वश में करि मैं आपणि प्रकृति कें बार बार रचना कर दीं। जड चेतन यौं
सबै विवश छन, सारै प्रकृति का वश में छन।8।

अर्जुन! उनरा कर्मन की तैं, मैं हूँ कोई बन्धन न्हा
उदासीन जस मैं बैठी छूँ, अनासक्त उन कर्मन थें।9।

मेरा सन्मुख प्रकृति करैं यो रचना जगत चराचर की
हेतु यैछ् कौन्तेय! विश्व जो, आवागमन में घुमनै रूँ ।10।

मैं नर तन को आश्रय ल्ही छूँ मूढत्र अवज्ञा करनी जो
परम भाव यो जाणन न्हातन, मैं ही भूत महेश्वर छूँ।11

आशा व्यर्थ व कर्म व्यर्थ सब, व्यर्थ ज्ञात ऊँ भ्रष्ट विवेक।
प्रकृति आसुरी और राकसी, मोहाछन्न तामसी छन।12

किन्तु महात्मा जन हे अर्जुन! दैवी प्रकृति करी आश्रय
छन अनन्य मन भजनी मैं कन, जाधी आदिदेव अव्यय।13!

नित्य निरंतर मेरो कीर्तन, मेरी तैं दृढ़ व्रत धरनीं
भक्ति साथ द्वि जोड़ी हाथ नित योग ध्यान मेरो करनी।14

क्वे फिरि ज्ञान यज्ञ लै मेरो करनी पूजा उपासना।
क्वे अभेद क्वे भेद भावलै, बहु विध मैं सर्वतोमुखी। ।15।

क्रतु मैं छूँए मैं यज्ञ स्वधा मैं, और महौषधि मैं ही छूँ।
मैं छूँ मंत्र आज्य लै मैं छूँ, मैंई हुताशन, हुत मैं छूँ।16।

पिता जगत को माता धाता औ पितामह लै मैं छूँ
ज्ञेय पवित्र ओंकार में, ऋक यजु साम सबै मैं छूँ।17।

गति, भर्ता, प्रभु, साक्षी मैं छूँ मैं निवास, मैं शरण सुहृद।
उत्पत्ति, प्रलय, और स्थिति मैं छूँ, मैं निधान मैं अव्यय बीज। 18

तपणी मैं छूँ, मैं जल खैंचूँ, मेघ रूप वर्षूं मैं ही।
अमृत और मृत्यु मैं अर्जुन! सत मैं छूँ, मैं असत् लै छूँ।19!

वेदन पढ़नी सोम पी पाप छोड़ी,
मैं थें बै जो रूा बट स्वर्ग चानी
सुरेन्द्र का लोक पुजि पुण्य जोड़ी
देवन दगै दिव्य भेगन कैं पानी।20।

वाँ ऊँ भोगी स्वर्ग लोकन में जाई
पुण्यक्षय भै मृत्यु लोक हूँ आई
तीनै वेदन का यज्ञ यागादि ल्यायी
ऊनी जानी कामना काम पाई।21।

जो अनन्य भाव लै मेरा पूजन चिन्तन ध्यान करूँ।
नित्य युक्त ले भक्त चितत को, योग क्षेम मैं स्वयं करूँ।22।

अन्य देवता भक्त हईं जो उनरी तैं श्रद्धा धरनी
ऊ ले छऽ काक्न्तेय मेरी पुज, किन्तु अविधि पूर्वक करनी।23।

सब प्रकार का यज्ञन ही मैं भोक्ता मैं स्वामी छूँ
मेरो तत्व नि जाणना वीलै, उच्च लोक है पतितै हूँ ।24।

देव उपासक देवन मिलनी, पितर हुनी पितरन पुजणी।
मेरा भक्त मिलि जानी मैं में, भूत हुनी भूतन पुजणी।25

पात, फूल, फल औ जल केवल मैं कन जे लै अर्पण हूँ
भक्ति भव ले दिई सबै कुछ, प्रेम सहित मैं ग्रहण करूँ।26।

जे करछे जे भोग लगूँ छै, पूजा होम दान अर्जुन!
जस ल ैतप व्रत पाठ करन्छै, ऊ सब कर मेरा अर्पण।27।

शुभ औ अशुभ फलन है ऐसिकै, कर्म बन्ध है **मुक्त** होलै।
योग औ सन्यास युक्त मन मकैं प्राप्त करि **मुक्त** होलैं ।28।

सब की तैं छूँ मैं एकनससे, न्हातन राग द्वेष मैं में।
जो मैं भजनी भक्ति भाव ले, मैं उन में रूँ ऊ मैं में ।29

यदि अत्यन्त दुराचारी लै, मैं कन भजौ अनन्य हई।
ऊ लै साधु जसो समझण चैं, वीक ठीक ही निश्चय छऽ।30।

जल्दी ही धर्मात्मा है जाल् पूर्ण शान्ति वी कैं मिलि जालि।
यो तू निश्चय जाणि ले अर्जुन! मेरा भक्त को नाश नि हुन।31।

अर्जुन! मेरो आश्रय ली जन, यदि ऊँ पाप योनि लै छन।
स्त्रीजन वैश्य ओ शूद्र तक मेरो परम पद पाइ गेछन ।32।

फिरि के कूण पुनीत ब्राह्मण, और भक्त राजर्षिन को।
करि अनित्य सुख रहित लोक में, मेरो भजन रात दिन हो।33।

मैं में मन धर मेरो भक्त हो, मेरी पूजा मकैं प्रणाम।
मेरा परायण, मेरी शरण हो, मैं में होलो तेरो धाम। 3

अमृत कलश दसूँ अध्याय
विभूति योग

श्री भगवान बलाण
महाबाहु! अब मेरा सुणि ले, यो रहस्यमय परम वचन।
तेरी पीति का कारण कूछूँ, करण हूँ तेरो हित साधन।1।

क्वे लै सुरगण ओ महर्षि जन, मरा जन्म कँ नी जाणन
सब प्रकार, सब देव महर्षिन को मैं भयूँ आदि कारण।2।

अज अनादि जो मकैं जरणन छऽ समझौं लोक महेश्वर कैं।
निश्चय ही ऊ मोह रहित नर मुक्त होलो सब पापन हे।3!

बुद्धि ज्ञान औ मोह रहित गति, क्षमा सम्य दम और शमनं
सुख दुख, उत्पत्ति प्रलय क्षय, भय और अभय पराजल जय।4।

समदर्शन, संतोष, अहिंसा, दान तपस्या यश अपयश।
हुनी पकट यौं सब प्रणिन का भाव मथैं बट मेरा वश।5।

सात महर्षि, चार पैली का, स्वायंभुव आदिक मनु लै
मेरा मानस भाव लै उपजीं, उपजी जनन बै सारी प्रजा।6।

यै विभूति योग कैं मेरा तत्वसहित जो समझौ नर।
कती योग में नि हो चल विचल जुटल योग बिन संशय डर।7।

यै सब की उत्पत्ति करूँ औ मैं बट सब यो चालित हूँ
यो समझी सब बुध जन भजनी, भ्येंकन भाव सहित हित हूँ।8।

मैं में चित्त प्राण मैं में छन, आपस में गुण गान मेरो।
एक दुसार थें कथन उपकथन, छऽ सुखरमण ध्यान मेरो। 9।

उन सदा ध्यान करनेरन कैं, नित प्रीत सहित भजनेरन कैं।
मैं शुद्ध बुद्धि यो दी दीं, उन मैं कन पइल्हिनेरन कैं।10।

मैं उनरो अज्ञान जनित तम अनुकंपा करि हरणै तें।
अन्तर में स्नेह प्रकाया करूँ वाँ ज्ञानदीप ल्ही धरणै तें।11।

अर्जुन बलाण
तुम परम ब्रह्म! तुम परम धाम! आपूँ छन अति पावन महान!
हे दिव्य पुरुष! हे आदि देव! व्यापक अनन्त शाश्वत अनादि!12।

यै कूनी सब ऋषि आपूँ थैं, देवन का ऋषि नारद जां लै
यैं देवल, असित व्यास ज्यू लै औ स्व्यं आपूँ कऽ छऽ याँ लै।13।

केशव! यो सब सत्य मानूँ मैं, जे कुछ तुमल बतायो छऽ
हे भगवन!तुमुल समूल भलिक, नी जाणन देवता दानव क्वे।14!

स्वयं आपूँ कैं आपण आफी, तुम जाणनै हुनला महमते!
हे पुरुषोत्तम! भूतेश! प्रभो! हे देवदेव! हे जगत्पते! ।15

तुम परम्पूर करि सकला सब, आपणी दिव्य विभूतिन कैं।
तुम अखिल लोक में व्याप्त हई ल्हीहअबैठी छनै विभूतिन कैं।16

हे योगिन! तुमन मैंकसि जाणू? औ कसिक तुमारो हो चिन्तन?
कन कन भावन बट में तुमरो, अब चिन्तन भजन करूँ भगवन्! 17।

विस्तृत कै कै दियो जनार्दन, फिरि उन योग विभूतिन कन
सुणि सुणि तृप्ति भई जै न्हातन, तुमारा अमृत मधुर वचन।18!

श्री भगवान बलाण
अर्जुन! सुण अब कूनो छूँ मैं, आपणी दिव्य विभूतिनकैं
जो जो प्राान छन कुरुश्रेष्ठ! विस्तारी मेरा अन्तै न्हा।19।

मैं आत्मा छूँ गुड़ाकेश! सब प्राणिन का अन्तरा भितरं
सब को आदि मध्य मैं ही छूँ और अन्त लै भूतन को।20।

आदित्यन में विष्णु भयूँ मैं, ज्योतिमान मैं रवि में छू!।
मैं मरीचि छूँ मरुत गणन में, नक्षत्रपमेंमैं शशि छूँ।21।

वेदन मं सामवेद छू!, देवराज छू! देवन में।
मन छू! मैं इन्द्रिन को राजा, भूतन में चेतना भयूँ ।22।

रुद्रगणन में मैं शंकर छू! धन कुबेर छूँ यक्षन में
अष्अ वसुन में पावक छू! मैं, मैं सुमेरु छू! शिखरन में।23

पुराहितन में पार्थ! वृहस्पति, सुरगुरु में मैं मुख्य भयूँ
सेनापतिन मंकार्तिकेय मैं, जलाशयन में सागर छूँ।24।

मुख्य महर्षिन में भृगु मैं छूँ, वाणी में एकाक्षर मैं।
यज्ञन में जप यज्ञ भयूँ मैं, स्थावर रूप हिमालय छ।25।

सब बोटन में पीपल मैं ही, देवर्षिन में नारद लै।
गन्धर्वन में भयूँ चित्ररथ, सिद्धन में मुनि कपिल समझ।26

उच्चैश्रवा घ्वाड़न में उत्तम, अमृतमंथन इत्रबै उदित हई
गजराजन मं ऐरावत मैं, नरगण बीच नराधिप छूँ।27।

सब अयुध में बज्र भयूँ मैं, कामधेनु मैं गाइन में।
प्रजनन करणी मदन भयूँ औ वासुकि छूँ मैं स्यापन में।28।

नागन में मैं शेषनाग छूँ, जलचर अधिपति वरुण भयूँ
पितरन मं मैं भयूँ अर्यमा, संयम करणी मैं यम छूँ। 29।

दैत्यन में प्रह्लाइ भक्त मैं, गणना करणी काल भईं
प्शुअन में वणराज सिंह छू! वैनतेय पक्षिन में छूँ। 30।

पावन करणी पवन भयूँ मैं, राम शस्त्रधारिन मं छूँ
जल जीवन मेंमगरमच्छ मैं, सरितन में मैं गंगा छूँ ।31।

सृष्टिन को मैं आदि अन्त छूँ तथा मध्य लै मैं अर्जुन!
विद्या में अध्यात्म ज्ञान छूँ, वाद छूँ वाद विवादन में।32

आदि अ कार आखरन में छूँ द्वन्द्व समास समासन में
अक्षय का काल में ही छूँ धाता विराट सर्वतोमुखी।33।

सर्वहरण करि दिणी मृत्यु मैं, फिर भविष्य को उद्भव छूँ
नारिन में कीर्ती श्री, वाणी,स्मृतिख मेधा,धृति और क्षमा। 34।

सामगान में वृहत् साम छूँ, गायत्री छन्दन में छूँ।
म्हैंएान में मंगशीर भयूँ मैं, छूँ .ऋतुराज छइ ऋतु में। 35

द्यूत छुँ मैं छल करनेरन को, तेजस्विन को तेज दूँ मैं। जय छूँ मैं
व्यवसाय मई छूँ, सात्विक जन को सत मैं छूँ।36।

वृष्णि वंश में वासुदेव मैं, पांडवन में अर्जुन छूँ ।
महामुनिन में वेदव्यास मैं, शुक्राचार्य कविन में छूँ।37।

दण्ड दमन करनेरन को मैं नीति विजय चानेरन की
मैं ही मौन लुकूनेरन को, ज्ञान ज्ञानवानन को छूँ ।38।

जो कुछ याँ छ जड़ यस चेतन, ेंं कारण वी छूँ अर्जुन!?
ऐस क्वे न्ही चर अवचर कती पन, रईसकौ जो मेरा बिन।39

न्हा सीमा, ना अन्त परंतप! मेरी दिव्य विभूतिन को।
जो कुछ यो विस्तार बतायो, वी कन समझ अंश तिनको।40।

जो कुछ सत्यं शिवं सुन्दरम्, जग में श्री उत्साह भरी
ऊ सब समझ विभूति मेरा ही तेज अंश बट छऽ उभरी।41।

इनन बहुत पिवस्तार कै जाणी के बड़ लाभ नि हौ अर्जुन!
यतुकै समझ चवन्नी भरि में, सौ जगतकी छ झुन झुन।42।

अमृत कलश अध्याय 11
विश्वरूप दर्शन योग

अर्जुन बलाण
मेरो अनुग्रह करणा की तैं, परम गोप्य उपदेश भयो।
तुमरा यो अध्यात्म वचन सुणि मेरो मोह सब हरी गया।1।

कमल नयन! विस्तार सहित सब जीव जगत को जन्म प्रलय।
और तत्वमय ज्ञान सुणो जो छऽ महात्म्य आपणों अक्षयं ।2।

जस तुमलै यो बता आपूँ कैं, तुम उस्सै छा परमेश्वर।
पुरुषोत्तम मैं देखण चाँछ् ऐश्वर्य प्रचुर ऊ रूप तुमर।3।

यदि ऊ मकैं देखूण योग्य छऽ, प्रभो! समझ छा ठीक अगर।
दर्शन निज अव्यय स्वरूप काकरै दियो सब योगेश्वर! ।4।

श्री भगवान बलाण
देख पार्थ रूप तू मेरा हजार, दिव्याति दिव्यसौ सौ प्रकार
देख नान रंगन की बहार, आकार अतुल अद्भुत प्रकार।5 ।

आदित्यन कै बसु रुद्रन कैं, अश्विनी कुमार मरुद्गण कैं।
देख् ले जे पैली कभैं नि देख सब अचरज कैं यै रण कैं।6।

एकबट्टै देख ले सारै जगत हे गुडाकेश चर अचर सहित
देख् और लै जे देखणों चाँछे, छ मेरी देह में सब्बै स्थित।7।

तन आँखनैल मकैं देखि नी सकलै चिन्मय स्वरूप मेरो अनूप।
ले दिव्य चक्षु मैं तुकै दिछूँ देख मेरो ऐश्वर्य रूप।8।

संजय बलाण
राजन! तब योगेश्वर हरि लै, उतकैं चमत्कार करि दी
दर्शन दिव्य करै अर्जुन कैं, परम विराट रूप धरि दी।9।

भौत भौत आँख् मूखन वाला दर्शन अति अचरज कारी।
धारी दिव्य विभूषण, भारी बहुतै दिव्यायुध धारी। 10।

माला वसन स्वर्ग का पैरी नन्दन गंध विलेपित धरि
विश्वरूप सबनै हूँ अचरज है गै देव अनन्त हरी।11।

सहस्र सूर्य को प्रकाश दगड़ै यदि उठौ अकाश
वी स्वरूप को विकास, सदृश नि हाके कोई भास।12।

संपूर्ण जगत का सब जन कैं, बहुधा सुविभक्त विभागन कैं,
देखि देवदेव प्रभु का तन कैं, ऊ अर्जुन संभाल नि सक मन कैं।13।

भे अर्जुन विस्मय चकित डरन।छुट पाणि कम्प रोमांचित तन।
करि नमस्कार खोर् धरो खुटन् जोडित्र हाथ देव थें कया वचन।14

अर्जुन बलाण
देखीं सबै देव थें देह ईश्वर! समस्त भूतादि समुदाय को घर।
कमल में बैठी ब्रह्मा महेश्वर, सबै रिखेश्वर स्वर्गाक अजगर।

कतुक रूप छन हाथ आँख् खुट पेट, सबै रूप लै रूप छऽ यो अनूप।
न अन्त न मध्य नैं कैंछ आदि, देखीं छ विश्वेश्वर! विश्वरूप।16

किरीटी गदा चक्रधरी हई,याँ सारे उज्याल एकबटी देख्ण्यूँ
याँ अग्नि ज्वाला छ् रवि द्युति छई, मैं देखि नि सकीणी तुमन देखण्यूँ 17!

जाणण योग्य तुम छऽ हो अक्षर परम,
तुमें विश्व का छऽ सदाश्रय परम
सदा एकरस धर्म रक्षक परम
सनातन व शाश्वत पुरुष तुम परम।18

पली काल है, तुम बली हे बली
भुजा भौत छन, नेत्र शशि सूर्य छन
तपी मूख में दीप्त ज्वाला जली,
आपण तेज लै लोक संतप्त छन।19

यो स्वर्ग पृथ्वी का बीची अकाश
तुमे एक फैली छऽ सब्बे दिशन।
अद्भुत महा उग्र यो रूप देखी
प्रभो! लोक तीने विकल भीत छन।20।

सबै देवता मुख में पन्सीणईं
हाथ जोड़ी हुई क्वे त अत्ती डरी।
स्वस्ति कूनी ऋखेश्वर औ सिद्धवर
स्तोत्र उत्तम पढ़ी प्रार्थना स्तुति करी।21।

रुद्र आदित्य वसु औ जो साध्यवर
विश्वदेव अश्विनीसुत मरुत्गण पितर।
यक्ष गंधर्व सुर औ असुर सिद्ध नर
सब चकित चै रईं रूप देखी तुमर।22।

महाबाहु! कस यो विकट रूप घुट।
कतुक मूख आँख औ कतुक हाथ खुट।
बहुत पेट विकरालडाढ़न का लुट।
देखी लोक पीड़ित मेरो कल्ज छुट।23।

आकाश पुजणी रंगिल झलझला
चाकल मूख उज्वल आँखा लै ठुला
ऐसो देखि तुमन चित्त व्यथा कुटि गई
विष्णु! धीरज दगै शान्ति लै लुटि गई।24।

विकराल छन दाढत्र मुख में तुम्हारा
देखी प्रलयकाल जसि ज्वाल धारा
दिशा भ्रम हई गो, न कें चैन मन कैं
जगत्प्राण! देवेश! प्रसन्न होओ।25।

सबै पुत्र धृतराष्ट्र का, साथ उनरा
राजा महाराज औ भीष्म द्रोणऽ,
कर्णादि सब वीर उनरा दगाड़ में,
हमरी तरफ का ले प्रधान योद्धा।26।

सरासर तुमार मूख पंसीणईं
तौं विकराल दाढ़न में कुछ फँसि गईं।
भयंकर बड़ा दाँतना बीच में।
देखीण ख्वारन को लै चूरण हई।27।

नदी जस पहाडत्रै चढ़ी वेग मे
समुद्रै उज्याणी जानी दौड़नीं
उसी कै सबै वीर नर लोक का
तुमरै ज्वलित मुख में पन्सीणईं। 28।

जसी कै लपट कैं लिपटनी आफी,
मरणै हूँ सब खैंची उनी पतंगं
उसी कै विनाशै तैं यों लोक सब,
तुमार मूख में पन्सीणईं वेगलै।29

समस्त लोकन कैं यो चाटि हाली।
सबै ओ घा जो यो काटि हाली।
उग्र लै तेज लै सब जगत पाटि हाली।
बिलै जस हालौ विष्णु! सब छाँटि हालह।30।

को छौ बताओ आपूँ उग्र रूप!
नमस्कार हे देव! रक्षा करौ।
हे आदि! आपूँ कैं चाहूँ जाणण,
विदित न्हाति क्ये छ प्रवृत्ति तुमरि।31।

श्री भगवान बलाण
मैं काल छूँए लोक नाशै हूँ बढ़ियो।
प्रवृत्त छूँ लोक संहार करुलो
तेरा बिनाउलै यो क्वे नि रौला,
जो युद्ध की तैं योद्धा अई छन।32।

यै वील ठाड़ उठ तू सुयश कमैं ल्हे,
शत्रुन कैं जीती ल्हे राजलक्ष्मी।
सबन कैंमैंलै आफी मारि हालौ।
अर्जुन तू केवल निमित्त हो बस।33।

भीष्म कैं, द्रोण कैं, कर्ण कैं,
जयद्रथादिक योधा सबन कैं
मारी हैलौ मैंल बिलकुल नि डर तू
बस युद्ध कर बैरि सेना कैं जिति ल्हे।34।

संजय बलाण
ऐतुक वचन सुणि श्री केशव का कामनै अर्जुन हाथ जोड़ी
नमस्कार करि फिरि फिरि कृष्ण हूँ? गदगद औ भयभीत बलाण।35

अर्जुन बलाण
हृषीकेश! छऽ योग्य आपणा यो कीर्तन,
जै में जगत हर्ष प्रमोद ल्हीं छऽ।
राक्षस डरी दश दिशान हूँ भाजनी
नमस्कार सबा सद्ध समुदाय करनी।36।

पूजा तुमरि नाथ! कि लै नि हो, जब
तुम ब्रह्मा है श्रेष्ठ छऽ आदिकर्ता
अनन्त देवेश जगन्निवास!
अक्षर तुमै सत् असत् परे जा।37।

तुम आदि देवन में पुरुष पुराणो,
सारे विश्व तुमरी काखि में समाणों।
सबै ज्ञान ज्ञानी परम धाम तुम छऽ
अनन्त रूपन रमी राम तुम छ छऽ ।38।

वरुण वायु यम अग्नि का, चन्द्रमा का,
प्रजापति पितामह का ले पिता तुम!
प्रभे नमस्कार हजार बारऽ।
प्रणाम फिरि फिरि नमस्ते! नमस्ते! ।39।

नमस्कार सामणी पुठा पछिन हूँ
नमस्कार हे सर्व! सबै तरफ बै।
अनन्त विक्रम! अमित वीर्यशाली!
सब छ तुमन में सब रूप तुम छऽ।40।

सखा समझि, मूढ़ मैं लै कयो हो,
रे कृष्ण ! रे यादव! रे सखा कै।
महिमा नि जाणि प्रेम प्रमाद में जो,
समान अज्ञान अपमान कर हो।41।

हँसी खेल में या कि भोजन शयन में,
एकाल् में हो या सबना दगाड में।
अच्युत! कती कैं जो महिमा घटै हो,
क्षमा करि दिया तुम प्रभे अप्रमेयऽ ।42।

पिता तुमैं चर अचर दजगत का
गुरु का लै गुरु तुम अति पूजनीयऽ
अधिक कहें क्वे तुमनै जसै न्हा
कैं तीन लोकन में प्रभावशाली।43।

प्रणाम चरणतल खोर धरी हो!
हे ईश! तुमरी स्तुति प्रार्थना छ।
पिता पुत्र कैं, जसि कै सखा सखा कैं
क्षमा उसी कै प्रियतम! करौ तुम ।44।

अपूर्वदर्शन करी हर्ष भै हो,
डरा वील व्याकुल मन पै हई गो
अतएव वी रूप मकैं दिखाओ
प्रसीद देवेश! जगन्निवासऽ ।45।

हाथन गदा चक्र पैरी मुकुट वी
 चाहूँ देखण मैं तुमन उसी कै।
 होओ चतुर्भुज, सहस्रबाहो!
हे सौमयदर्शन, हे विश्वमूर्ते ।46।

श्री भगवान बलाण
प्रसन्न अर्जुन! मैं छूँ तेरी तैं
परम रूप तब तऽ देखा योग रि यो।
विराट, उज्वल, अनन्त, आदिम,
 तेरा सिवा केल पैली नि देखो। 47।

न वेद न यज्ञ न दान जप लै
न कर्म शुभ करि न उग्र तप लै।
 नर लोक मे रूप देखी सको क्वे
देखो जसो ऐल कुरुवीर! त्वीलै ।48

 दुखी नि हो और विमूढ़ नी हो,
 ऐसो घोर मेरो यो रूप देखी।
सब डर छोड़ी प्रसन्न मन हो,
वी रूप मेरो अब देखि ले तू। 49।

 संजय बलाण
अर्जुन थें यो वासुदेव लै क्वे
 स्वरूप पैलो फिरि वी देखायो,
धीरज धरायो डरी मन बँधायो,
 विराट फिरि सौम्य शरीर आयो। 50।

अर्जुन बलाण
देखी मानव रूप जनार्दन जुमरो अब यो सौम्य मधुर।
चेत आ छ आपणो मैं कन बुद्धि ठीक भै निकली डर ।51

श्री भगवान बलाण
जस त्वीलै देखि सकौ मकैं यो,ऊँ दर्शन अति दुर्लभ छन
सबै देवता जांलै चानी है जौ उनन कँ यो दर्शन ।52।

न वेद पाठेल् न दान दिणा लै, न यज्ञ करि घोर तप हो,
 यो रूप देखणों न शक्य हूनो, जस त्वील क्केन देखोछ् ऐति कैं ।53।

अर्जुन! जबै अनन्य भक्ति हो, तब केवल यो रूप देखीं।
 तत्वज्ञान हूँ तबै परंतप! तब प्रवेश वाँ करी सकीं। 54।

 मेरा आश्रय कर्म मेरी तैं, मेरो भक्त हो छोड़ि आसक्ति।
प्राणिमात्र हूँ वैर रहित जो, अर्जुन पुजैं मकैं वी भक्ति। 55।

अमृत कलश बरूँ अध्याय
भक्ति योग

अर्जुन बलाण
यै प्रकार जो, सदा युक्त मन, भक्ति सहित कर तुमर भजन
या जो अक्षर निराकार कन, इन योगिन में ठुल को छनं ।1।

श्री भगवान बलाण
एकमात्र बस मेरा भजन में, नित्य लागी छऽ जनरि लगन
श्रद्धा पूर्णमेरो ही पूजन, मेरा मत में वी ठुल छन।2।

पर जो अक्षर ब्रह्म अगोचर अकथनीय जो पर है पर।
जो अचिन्त्य नित सब जाग पुजिया अतिशय अचल कूट भजनी।3।

संयम करि जो सब इन्द्रिन कन, नित समबंद्धि ध्यान धरनी
ऊँ लै मेकन प्राप्त हुनी सब प्राणि मात्र को हित करनी।4।

हुँ छ उनन पैं क्लेश अधिकतर निराकार मेंचित्त जनर।
बिना छुटी अभिमान देह को, अव्यय गति हूँ अति दुष्कर।5।

ऊँ जो सब कर्मन को मेरी तैं, भलि कै करी दिनी सन्यास
केवल एकाकार योग में, मेरा ध्यान में करौ निवास।6।

उनरो मैंतारण करणी छूँ मृत्यु रूप भव सागर पार
जनार चित्त में बसी रूँछ मैं उनर करूँ सत्वर उद्धार।7।

मैं में मन कैं लगा औरद वाँ बंद्धि आपणी थिर बैठा।
तब निवास करलै तू मैं में, यै में कोई संशय न्हाँ ।8।

यदि तू चित को समाधान करि धरिदनी सकनै मैं में मन।
बार बार अभ्यास योग लै, मेरी इच्छा कर अर्जुन ।9।

यदि अभ्यास लै नी करि सकनै, तब मेरी तैं कर्मन करं
कर्म मदर्थ करण पर लै तू, सकल सिद्धि कैं पै सकलै। 10

कर्ममदर्थ करण हूँ लै यदि तू असमर्थ हई जाँ छै।
मन वश करि उद्योग योग कर सब कर्मन को फल छांड़ि दे ।11।

श्रेष्ठ ज्ञान छ अभ्यासन है, ज्ञान है ध्यान विशेष भयो।,
फल को त्याग ध्यान है भल भै, शान्ति निरंतर त्याग बै हूँ।12।

सब प्राणिन हूँ द्वेषरहित जो, सब को मित्र दया करणी।
ममता अहंकार ने जै में, क्षमावान दुख सुख में सम।13।

म न संतोषी ध्यान में बैठी, चित्त वश करी दृढत्र निश्चय।

मैं कन अर्पित करी बुद्धि मन, मेरो भक्त ऊ मेरो प्रिय !14!

जग में जो कै दुख नि पुजूनो जग को क्वे जै दुख नी दिन
 हर्ष अमर्ष और भय चिन्ता रहित सदा ऊ मेरो प्रिय ।15।

 आश रहित पवित्र चतुर जो उदासीन औ व्यथा रहित।
 फलाशक्तिको त्याग करी हो, मेरो भक्त ऊ मेरो प्रिय ।16।

नि करन हर्ष जो द्वेष नी करनो, नि करन शोच न आकांक्षा
शुभ और अशुभ द्वियै जो छोड़ि द्यो भक्त छ ऊ मेरो प्रिय।17

 शत्रु मित्र हूँ जो एकनससे मान और अपमानै तें।
 शीत गरम औ सुख दुख में लै सब आसक्ति रहित जो छ18।

स्तुति निदा सम, सदा मौन रूँ । जां जस हो संतोष करौं
घर कैं न्हा, छऽ थिर मति जै की, भक्ति मान ऊ मेरो प्रिय।19।

 मरम प्रेम लै मेरो दिई यो, धर्मामृत जो करौ ग्रहण
ऊ अतिशय प्रिय मेरो भक्त छऽ श्रद्धा धरि रै मेरी शरण।20।

,

अमृतकलश तेरूँ अध्याय
क्षेत्र क्षेत्रज्ञ विभाग योग

श्री भगवान बलाण
यो शरीर संसार जामों जाँ कौन्तेय। सब क्षेत्र कईं
आपण खेत जा भली पछाण ल्हीं ऊ आपणो क्षेत्रज्ञ कईं। 1।

मैं कन ही क्षेत्रज्ञ समझ तू,सब क्षेत्रन को हे भारत!
क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ ज्ञान छऽ उत्तम ज्ञान मेरा मन में।2।

काँछ् क्षेत्र ऊ? कतुक क्षेत्रफल? कतुक उपज औ कसिकै भै?
कस विकार औ कस प्रभाव छ सब संक्षेप में मैं थें सुण।3।

ऋषिगण लै नाना गीतन में, बहु छन्दन में विविध प्रकार।
ब्रह्म सूत्र कापदन में यै को यथायोग्य करनी विस्तार।4।

महाभूत औ अहंकार भै मूल प्रकृति बै बुद्धिरु मन।
दश इन्द्रिय छन ज्ञान कर्म की दगड़ै पाँच विषय ले छन।5।

सुख, दुख, इच्छा द्वेष दगै संघात चेतना धृतिलै छऽ
पूरो क्षेत्र विकार सहित यो सब संक्षेप में बतै दियो।6।

दंभ नि हो, अभिमान नि हो, हो क्षमा अहिंसा, सज्जनता
गुरु सेवा, पवित्रता, स्थिरता, पुर हो मन इन्द्रिय निग्रह।

भोगन की तैं हो विराम औ अहंकार की लाग नि हो
जन्म मरण औ जरा रोग का दुख दोषन कन देखनै रौ।8।

ममता औ आसक्ति नि हो क्ये दारा सुत घर परिजन की।
कती चित्त विचलित नी हो, हो अनिष्ट या हो मन की।9।

मेरा ही जो ध्यान में बैठी केवल मेरी भक्ति करौ।
भलो लागौ एकान्त सदा ही, जन समूह बै मन हटि जौ।10।

नित्य त्यागी अध्यात्म ज्ञान में तत्वज्ञान को परिशीलन।
यै छ् ज्ञान, ज्ञानी का लक्षण शेष अन्यथा सब अज्ञान।11।

जाणण योग्य अब ज्ञेय बतैं दीं, जै कन जाणी अमृत मिलौ।
आदि रहित ऊ परब्रह्म देख् सत् लै न्हा ऊ असत लै न्हा।12।

सबै तरफ हूँ हाथ् खुट आँख् छन, सबै तरफ हूँ ख्वार मुख छन
सबै तरफ हूँ लागी कान छन, व्याप्त करी छन लोकन कन ।13।

सब इन्द्रिन को गुणाभास छऽ सब इन्द्रिन बै रहित छ् ऊ।
अनासक्त परद पालन करणी, निर्गुण हुण पर गुण भोगी ।14।

भितर भरी लै, भेर छई लै, चर लै वी छऽ अचर लै वी।
अती मसिण तब अविज्ञेय छऽ , दूर है दूर निकट लै वी।15।

पूर्ण अखंडित भूतन में ऊ, देखीं परन्तु विभक्त हईं।
ज्ञेयतत्व ही सब भेतन को, जन्म विकास विनाश करूँ।16।

सब ज्योति की परम ज्योति, पर, अंधकार है परे कईं
ज्ञान ज्ञेय और ज्ञान गम्य छऽ सबना हृदय में बैठी छऽ !17।

एतुकै क्षेत्र ज्ञान ज्ञे छऽ जो संक्षेप में बतै दियो।
मेरो भक्त जो यो सब समझी मेरा भाव मेंऐ जालो।18।

प्रकृति और ऊ पुरुष धनंजय छन द्वीयै अनादि अक्षय
द्वन्द्व विकार और यो गुणत्रय समझ प्रकृति बै हईं उदय।19।

कार्य करण द्वीयै बणूण में प्रकृतिइ हेतु कई जाँ छऽ
सुख दुख का उपभोग करण में पुरुष कें हेतु कई जाँ छऽ।20

प्रकृति संग यो प्रकृति अंग में भोगों प्रकृति जनित गुण संग।
यै गुण संग तरंग रंग डुबि, मिलनी भल नक जन्म प्रसंग।21।

साक्षी सममति दिणिया भर्ता भेक्त और महेश्वर छऽ।
परमात्मा यो पुरुष कई जाँ देह भितर हुण पर '**पर** ' छऽ ।22।

जो यो पुरुष पछाणि ल्हीं निर्गुण प्रकृति का वी का गुणन दगै।
सबै भांति वर्तण पर लै ऊ पुनर्जन्म हूँ कभैं नि आ।23।

ध्यान योग लै देखी ल्हिनी क्वे, आत्मा कैं आत्मा भीतर।
क्वे देखनी यै सांख्य योग लै, कर्मयोग करि कोई दुसर।24।

पर क्वे यैकँ नि देखि बेर लै, सुणि सुणि करनी उपासना
सुणी में श्रद्धा धरणी लै यां तरनी मृत्यु महासागर।25

यावत् कुल सब स्थावर जंगम, जाँ जतकै उत्पन्न हुँ छऽ।
क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ याग का कारण समझ ल्हिये अर्जुन! ।26।

नाशवान यै सबै चराचर घट घट भीतर अविनश्वर
जो समान बैठी परमेश्वर देखनो छऽ वी देखनो छऽ।27।

एकसार सब जाग् देखनो छऽ सम स्वरूप में परमेश्वर।
आत्म हनन नि हुन ऊ आत्मा तब ऊ पुजौं परम गति कैं।28।

जो देखनो छऽ सब प्रकार का कुल कर्मन कै प्रकृति करैं
और पुरुष कें देखों अकर्ता, वी वास्तव में ठीक देखों ।29।

बहुरूपी इन सब भूतन कैं एकरूप जो देखी सकौं।

औ विस्तार में देखी एक कैं ब्रह्म स्वरूप कैं पाई ल्हीं ।30

अनादि हुण पर, निर्गुण हुण पर ऊ अविनाशी परमात्मा।
रूँ शरीर में कौन्तेय! पर क्ये नि करनश कैं लिप्त नि हुन।31

जसिकै यो सर्वत्र पहुँचियो, मसिण अकाश लिप्त नी हुन।
उसिकै सारे देह में रूणीं आत्मा कतीं लिप्त नि हुन। 32।

जसिकै एक प्रकाशक रवि लै, सारे लोक में हूँ आलोक
उसीकै सारे क्षेत्र को भारत! एक प्रकाशक छऽ क्षेत्रज्ञ। 33।

क्षेत्र और क्षेत्रज्ञ को अन्तर ज्ञाननेत्र लै जो देखनी।
भूत प्रकृति बै मोक्ष पछाणनी, परम तत्व हूँ ऊँ पुजनी।34।

अमृत कलश चौदूँ अध्याय
गुणत्रय विभाग योग

श्री भगवान बलाण
परम भूय यो पुनः बतै दीं यो अति उत्तम ज्ञान कईं
यैं कन जाणी मुनिगण सब्बै परम सिद्ध हूँ पहुँचि गईं।1।

योई ज्ञान को आश्रय ल्ही जन, एकरूपता मेरी पई छन।
सृष्टि समय उत्पन्न नि हुन उन प्रलय काल में कष्ट नि हुन 2

मेरी योनि यो महद्ब्रह्म छऽ मैं वाँ गर्भाधान करूँ
उत्ती बटी उत्पत्ति हुँछऽ तब सब भेतन की हे भारत।3

लख चौरासी योनिन में जो भिन्न मूर्ति उत्पन्न हुनी
महद्ब्रह्म छ उनरी माता, मैं छूँ पिता बीज दाता।4

सत्व,रलस, तम, तीनैं गुण छन⁄कृति बटी उत्पन्न हई।
महाबाहु यों बन्धन कारक, देह में निर्गुण देही कैं।5।

प्रथम सतोगुण स्फटिक जो निर्मल उज्याल देखूँ निरुपद्रव रूँ
सुखा दगाड़ औ ज्ञान दगााड़ यो बन्धन कारक हूँ अर्जुन।6।

समझ रजोगुण राग रूप छ तृष्णा दगै पैद हूँ छऽ
यो बन्धन कौन्तेय! लपेटि दीं कर्म संग में देही कैं ।7

तम अज्ञान अन्यार बै उपजों, मोह में हालि दीं देही कैं
यो प्रमाद आलस निद्रा लै कस दीं बन्धन में भारत! 8

सुख आसक्ति सतो गुण में हूँ रज बै कर्मन की भारत!
तम यो ज्ञान आनन्द कैं ढकि दीं औ प्रमाद में लिप्त करूँ;।9।

रज ओ तम कैं दबै दिंछऽ जब, बसो सतो गुण तब भारत!
रज औ सत कैं दबूँ तमोगुण तम ओ सत कैं रजस दबूँ।10

यै शरीर का सब द्वारन में सब इन्द्रिन में हुँ छऽ प्रकाश
ज्ञान उदय हो मन निर्मल हो, जाणौ सतोगुण करौं निवास11

लोभ राग हूँ राग बढों तब कर्मन की घुड़ दौड़ लागैं
जबै रजोगुण बढ़ि जाँ अर्जुन! मन अचैन लालसा जागैं ।12।

अंधकार आलस्य मोह में, भुली जानी अपना कर्तव्य।
यो लक्षण जब प्रकट हुनी तब तमस बढ़ी जाँ कुरुनन्दन।13।

सतोगुणा उत्कर्षकाल में देहत्याग हो देही को
तो ज्ञानिनकैं मिलणी उत्तम, अमल लोक में ऊ पुजलो।14।

बढ़ी रजोगुण समय मृत्यु हो कर्म करण हूँ जन्म ल्हेलो।
तमस बढ़ी में मरण हई पर, मूढ़ योनि बै पैद हुनी !15!

सतोगुणी का सत्कर्मन को सुखप्रद निर्मल फल कूनी
दुःख रजोगुण को फल हूँ औ तामस को फल छ अज्ञान।16।

सात्विक गुण बै ज्ञान उदय हूँ और रजस बै लोभ चढौं
मोह प्रमाद विषाद दगाड़ में, तामस बै अज्ञान बढौं।17।

ऊर्ध्व गमन हूँ सतोगुणी को मध्य में रूनी रजोगुणी।
अधम वृत्ति का तमोगुणी जन सदा अधोगति हूँ जानी।18।

कर्ता गुण का सिवा दुसर कैं जब द्रष्टा देखनो न्हाँती
तब ऊ निर्गुण पु3ष पछाणि ल्हीं मेरा भाव में ऐ जाँ छऽ।19

देह बीज माया उपाधि इन तीन गुणन बै पार हूँ जो
जन्म मरण औ जरा दुःख बै छूटी अमर हई जाँ छऽ ।20.।

अर्जुन बलाण
प्रभो! उनरक्ये लक्षण छन जो तीन गुणन बै पार हुनी
कस् आचरण हूँ उनरो कसिकै तीन गुणन बै पार हुनी।21

श्री भगवान बलाण
सत प्रकाश, रज की प्रवृत्ति औ तम को मोह जबै अर्जुन!
ऊनी उनरो द्वेष नि करनो, जाण् पर नी हुनि अभिलाषा।22।

जो आसीन छ उदासीन जस गुणनैल विचलित नी हूनों
जोड़ घटूण गुणन को चै रूँ भाग ठीक अधिकारी ऊ ।23।

स्व स्थित रूँ दुख सुख एकनस्सै, माट् ढुंग सुन छ एकनस्सै।
भल नक मक समान धैर्य रूँ जसि तारीफ उसी निन्दा।24।

मान और अपमान एकनसै, शत्रु मित्र काउप्रश्न उसै।
सब आरंभ दुटी छन जै वै वी थें गुणातीत कूनी।25।

में नारायण में जो अविचल अपनो भक्ति भाव धरनी।
तीन गुणन बै पार हई ऊँ मोक्ष प्रप्ति का योग्य हुनी।26।

अचल प्रतिष्ठा परब्रह्म की अमृत की औ अव्यय की।
एकान्तिक सुख की परमावधि अचल धर्म की मैं ही दूँ ।27।

अमृत कलश पन्द्रूँ अध्याय

पुरुषोत्तम योग

श्री भगवान बलाण
जड़ अकाश हूँ तीर हूँ फांग छन, ऐस अविनाशी पीपल छऽ
छन्द वेद का यैक पात छन, जो यो जाणौ उ वेद जाणौ।1।

तली मली हूँ फांग फैलिया छन सींची गुणन लै विषय कल्लि लागनी
पाताल जाँ लै जाड़ गैर पुजिया, नर लाक कैं जो कर्मन में बाँधनी।2

यो रूप यैको जाणि नी सकीनो। न आदि न अन्त न थिति मिलैं कैं।
गैरा जड़न वाल् यै पीपलै कैं विरक्ति रमटेल काटि दे भली कै। 3।

तब ऊ परम उच्च पद खोजणों चैं। जाँ पुजि नि ऊना संसार हूँ फिरि
 जाँ बट पुराणो यो फैलियो छ ऽ वी आदि प्रभु की शरण ल्हि छूँ मैं।4।

बिन मान मोहै, आसक्ति जितिया, अध्यात्म ज्ञानी बिना कामना का
सुखदुख आदिक द्वन्द्वन बै छुटिया, ज्ञानी परम अव्यय धाम पुजनी।5।

सूर्य, चन्द्रमा, अग्नि, कोई लै वाँ प्रकाश नी करि सकना
वाँ पुजि फिर क्वे लौटन न्हातन, परम धाम ऊ मेरो छ ऽ ।6।

जीव लोक में देह में रूणी जीव सनातन अंश मेरो।
मन छे पाँच इन्द्रिन कैं ऊ पगकृति संग लै खैंचि ल्हि छ ऽ।7।

जै शरीर कैं छोड़ी दुसार में जाण लागों जब जीवात्मा
यो छै कैं ही साथ लिजाँ जस वायु गंध कैं खैंचि लिजाँ ।8।

आँखा , कान, त्वचा, रसना औ नाख, पाँच इन्द्रिन द्वारा।
मन युत बैठी जो शरीर मे, सबविषयन को भोग करौं।9।

देह में रूणीदेह छोडत्र दिणी, भोगणी गुणन में लिपटी कैं।
अज्ञानी अंधा नि देखना, देखनी ज्ञान आँखन वाला।10।

करिदप्रयत्न योगीजन यै कन आत्म ध्यान धरि देखि ल्हीनी।
पर अचेत मन अज्ञानी जन जतन की लै देखि नीं पन्। 11।

तेज भरी आदित्य भितरजो, अखिल जगत कैं करौं प्रकाश
तेज चन्द्रमा में पावक में, मेरा तेज को समझ विकास।12।

धरणि प्रवेश करी प्राणिन कैं, धारण करूँ आपणि उज लैं छँ
पोषण करूँ अन्न औषधि को, स्वयं रसात्मक सोम हई।13।

मैं वैश्वानर अग्नि रूप, हूँ, प्राणि मात्र का देह भितर।
प्राण अपाना साथ रई मैं चार प्रकारा अन्न पचूँ।14!

सबना हृदय में मैं बैठिया छुँ स्मृति ज्ञान दीं मैं, मैं लाप करिदीं।
सब वेद द्वारा मैं ही विदित छूँ, मैं वेद विद मैं वेदान्त कर्ता15।

क्षर और अक्षर द्वि प्रकार पुरुष लोक मैं छन अर्जुन!
नाशवान सब प्राणी क्षर औ कूट बसी ऽ अक्षर छन। 16

इनन है उत्तम पुरुष अन्य छऽ परमात्मा जै थें कूनी।
तीनलोक में अनुस्यूत ऊ धारक अव्यय ईश्वर छऽ। 17

मैं क्षर है सर्वथा अलग छूँ अक्षर है लै उत्तम छूँ

यै वीलै मेंलोक वेद में, पुरुषोत्तम विख्यात भयूँ ।18।

मोह रहित ज्ञानी जो मैं कन पुरुषोत्तम कै जाणनो छऽ
वीदसव्रज्ञ भयो नित मैं कन सब भावन बै हे भारत।19।

ऐतुकै गुप्त रहस्य शास्त्र छऽ हे निष्पाप कयो मैं लै
यै कन जाणी बुद्धिमान हूँ, औ कृतकृत्य हुँछऽ भारत।20।

,

अमृतकलश सोलूँ अध्याय
देवासुर संपद विभाग योग

श्री भगवान बलाण
अभय हृदय मन शुद्धि साथ में, ज्ञान योग में रति मति हो
दान दमन स्वाध्याय यज्ञ तप धर्माचरण सरल गति हो।1।

सतय अहिंसा बिना क्रोध हो, त्याग शान्ति बिना छल.व्याज।
दया सबन हूँ विषय अलोलुप, मृदु अचपल, कुकर्म की लाज।2।

तेज, क्षमा, धृति, शुद्धि अंग की द्रोह नि हो, अति मान नि हो।
यो देही सम्पत्तिवान का जन्मजात गुण छन भारत! 3

दम्भ, दर्प, अति मान, क्रोध छल, दुव्रिनीत कटु कुटिल वचन
मोह औ अज्ञान पाथ्र यों, सबै आसुरी सम्पत्ति छन।4।

देवर सम्पत्ति मोक्ष देऊणी, बन्धन कर आसुरी दुसर।
तू लै अर्जुन दैवी सम्पत्ति ल्ही जन्मी छे फिकर नि कर।5।

द्वी प्रकार को नर स्वभाव हूँ द्याप्त एक और दुसर असुर।
भलि कै दीं दैवी गुण सब, आब आसुरी पार्थ! सुण ल्हे।6।

क्ये करणी, क्ये अकरणीय छऽ कुछ नी मानन आसुरी जन
न शौच नै आचार ठीक क्ये, न सत्य उन में हूँ छऽ कती।7।

जग असत्य छऽ निराधार छऽ मालिक ईश्वर क्वे न्हाती।
आपण आफी यो बणी हुई छऽ खै पी मौज करण हूँ छऽ ।8।

ऐसी धारणा अवलंबन करि आत्म विनाशी, अविवेकी।
जनअहित करणी क्रूर कर्म करि, जग विनाश हूँ पैद हुनी।9

पुरे नि पड़नी तृष्णा जकड़ी दम्भ म ान मद में अकड़ी।
मोह में फँसी अशुभ निश्चय का कुत्सित कर्मन कैं करनी।10।

क्ले अपार चिन्ता तृष्णा में मरण काल जाँ लै फँसिया
काम भोग ही परम रुचिर छन, यै निश्चय मन में धँसिया। 11

बँधी सैकड़ों आशा ज्यौड़न काम क्रोध में भरी हुई।
काम भोग हूँ दौड़ धूप सब, अन्यायी धन संचय हूँ।12

ऐतुक मनोरथ पूर्ण है गया, अघिल यतुक यो पूर्ण करुँल।
ऐल ऐतुक यो कमैं हैलौ धन अब भविष्य में कतुककमूल।13।

इन शत्रुन को नाश करि हालो, ऐतुक रइ छन नाश करण
ईश्वर मैं छूँ, भोगी मैं छूँ, महाउपुरुष बलवान सुखी।14।

मैं कुलीन धनवान ठुलो छूँ, को छऽ अन्य समान मेरा।
यज्ञ दान मैं करूँ, सुखी रूँ ऐस अज्ञान विमोहित छन।15।

कतुक भाँति छन भ्रमित चित्त जो मोह जाल में फँसी हुई
काम भोग में दत्तचित्त यों, घार नरक में जै पड़ला।16।

अहम्मन्य ओ कुटिल घमंडी मान और मद में मातिया
नाम हुणी बस यज्ञन करनी, सबा विधि हीन दम्भ भरिया।17

काम क्रोध बल दर्प फूलिया आपणै अहंकार डुबिया।
अपना औ परदेह में मेरा निदक और द्वेष करणी ।18

क्रूर अशुभ करणी विद्वेषी निदक नराधमन कै मैं।
यैसंसार में सदा आसुरी पाप योनि में खेड़नै रूँ।19।

जन्म जन्म ऊँ मूर्ख आसुरी योनिन में पड़नै रूनीं।
मके। नि पूना कौन्तेय! तब, छुटनी और अधम गति हूँ।20।

तीन द्वार छन नरक उज्याणी, नाश करि दिणी जीवन को।
काम क्रोध औ लोभ य वीलै, इन तीनन कैं तजणों चैं।21।

अंधकार इन तीन द्वार है, जो नरबचि जानी कौन्तेय!
आत्म श्रेय का छिलुक जगूनी पुजनी भलिक परम गति हूँ।22।

जो जन शास्त्र विधिन कैं छोड़ी जस मन ए उस कर्म करौ।
क्ये पुरुषार्थ प्राप्त नी हुनकें, न सुख मिलौ, न शुभ गति हूँ।23।

शास्त्र प्रमाण त्वील मानणों चैं कार्य अकार्य जाणण की तैं।
जाणी शास़ विधान लोक में कर्म करण हूँ भलो भयो। 24

अमृत कलश सत्रूँ अध्याय
श्रद्धात्रय विभाग

अर्जुन बलाण
शास्त्रै विधि कैं छोड़ी जो जन श्रद्धा सहित यजन करनी।
कृष्ण उनरि ऊ निष्ठा कसि भै, सत रज तम में को जसि भै?

श्री भगवान बलाण
तीन तरह की श्रद्धा हूँ यो सब प्राणिन की स्वाभाविक
सात्विक राजस और तामसी,इनरा भेद भली कै सुण।

हे भारत! सबनै की श्रद्धा संस्कारन अनुरूप हुँ छऽ।
श्रद्धामय छऽ पुरुषश जेकि जसि श्रद्धा हो ऊ उसै होलो।3।

सात्विक जन देवन कन पुजनी यक्ष राक्षसन राजस जन।

भूत प्रेत की पूजा करनी जो जन ऊँ तामस छन।4।

शास्त्र विहित है रहित घोर तप,करनी जो जन मन मौजी
अहंकार पाखंड देखूणी काम राग लै हमक भरी।5।

केवल अपनो ही शरीर में, अन्तःकरण में मकैं लगै।
दुर्बल करनी, कष्ट पुजूनी, उनरि आसुरी बुद्धि समझ। 6।

सबनै को आहार लै ऐसिकै तीन प्रकारै प्रिय लागों।
यज्ञ, दान, तप, लै तीनै विधि, हुनीउनार भेदन कैं सुण।7।

आयु और आरोग्य विवर्द्धक, बल, सुख , प्रीति सहित सुविचार।
सरस स्निग्ध थिर पौष्टिक रुचिकर, सात्विक जन को प्रिय आहार।8।

चरपिर खट्टो लूण खुस्याणि को, रुखो तिखो दाहक तन को।
दुःख,शोक औ रोग उपूणी प्रिय आहार राजस जन को ।9।

जली काचो नीरस दुर्गन्धित ठंडो बासी बिना रोजी
जुठ पिठ औ अपवित्र बणी सब भोजन प्रिय तामस भोजी।10।

फल इच्छा है रहित यज्ञ जो विधिवत समाधान मन करि।
करी जानी र्तिव्य समझि शुभ, एस कै समझौ सात्विक भै।11।

फल की इच्छा लक्ष्य बणाई वैभव दंभ देखूणै तैं।
भरतश्रेष्ठ! जो यज्ञ करीनी उनन कैं समझौ राजस भै।12।
सब विधि हीन अन्न दान बिन, मंत्र हीन दक्षिणा विहीन।
श्रद्धा हीन जो यज्ञ करीनी उननै कैं तामस कूनी।13

शौच सरलता संध्या पूजा, देव विप्र गुरु ाानी की
ब्रह्मचर्य व्रत और अहिंसा, कायिक तप यो कई गयो।14।

कै कवे चितत दुखूणी नी हो वचन सत्य प्रिय हितकर हो।
पाठ आपण स्वाध्याय हेतु हो, वाचिकतप यै थें कूनी।15।

मन प्रसन्नता और सौम्यता, मौन और मन को निग्रह।
बुद्धि भव की शुद्धि एतूकै, यो मानस तपदकई गयो।16।

जो नर परमोत्तम श्रद्धा धरि तीनैं विधि का तप करनी।
फल की इच्छा बिना योग करि यै तप थैं सात्विक कूनी।17।

आपणै हो सत्कार मान पुज, अतवा दंभ देखूणै तैं,

अथिर औ चंचल तप हूँ जो वी तप थें राजस कूनी ।18।

हठ हेकड़ में आपूँ कै पीड़ा दिण हूँ जो तप करी जानी
दुसरन को विनाश करणा हूँ, ऊ तप तामस समझि लियो।19।

दान करण हूँ दान करी ग्वे, प्रति उपकार नि चाही क्ये।
देश काल औ पात्र विचारी, दी वी दान भयो सात्विक।20।

प्रति उपकारै लक्ष्य करी जो फल मिलणा का मतलब लै।
दिण हूँ दी, पै चित्त दुखी करि, ऐसो दान ही राजस भैं21।

जब कुपात्र कैं दिईं 'कुथल ' में अवसर काल विचार बिना।
बिना मान ही तिरस्कार करि, ऐसो तामस दान कईं।22।

ओं तत्सत् यो ब्रह!म निरूपण स्मरण करी जाँ तीन प्रकार
ब्राह्मण, यज्ञ, वेद की रचना, आदि काल में यै बे भै।23।

ओम् उच्चारण करी जाँ पैली यज्ञ दान तप किया समय।
यै वीलै हो यो विधान कर, वेद ब्रह्मवादी जन लै।24।

तत् कूनी फल त्याग करण हूँ यज्ञ दान तप किया समय।
और लै जो कुछ धर्म कर्म शुभ करनी मोक्ष चाहणी जन।25।

शुभ हुण पर यो सदाचार हूँ 'सत् ' प्रयोग में ऊनो छ
और मांगलिक कर्मन हूँ लै 'सत ' को शब्द कई जाँ छऽ ।26।

यज्ञ, दान, तप में स्थिति कै लै 'सत् 'ही नाम दिई जाँ छऽ
'तत्' निमित्त जो कर्म करीनी, उनरी थें लै '**सत ' कूनी।27।**

अश्रद्धा लै यज्ञ,दान, तप जे लै ओर करी जाँ छऽ
' असत' कई परलोक न क्ये फल और न क्ये यै लोक हुनो।28।

अमृत कलश
अट्ठारूँ अध्याय
मोक्ष सन्यास योग

अर्जुन बलाण
महाबाहु सन्यास तत्व कैं, भलिकै मैं समझण चाहूँ।
हृषीकेश ! हे हे केशि निषूदन! त्याग लै भली कै समझाओ।1।

श्री भगवान बलाण
काम्य कर्म सब निकरण कैं ही ानिन लेसन्याय बतां
सब कर्मन का फल कैं छाड़ि दिण अवद्वानन लै त्याग कयो।2।

दोष भरी सब कर्म त्याज्य छन कुछ मनीषिजन या कूनी।
यज्ञ, दान, तप तजण नि चैना कुछ ओरन को कथन एसो।3।

हे अर्जुन अब त्याग विषय में मेरा निश्चित मत कैं सुण
पुरुषसिंह! यो त्याग लै निश्चय तीन प्रकार कई जाँ छऽ ।4।

यज्ञ, दान, तप तजण नि चैना, यो अवश्य करणीय छनऽ
यज्ञ ज्ञान तप विज्ञ जनन ले सदा पवित्र करि दीणी छन।।5

इनने कैं करणो चैं छऽ फल त्यागी आसक्ति छोड़ी
समझि आपण कर्तव्य पाथ्र! कर यो मेरो उत्तम मत छऽ।6।

नियत कर्म को त्याग करि दिणों, उचित न्हाति यो कै की तैं
मोह विवश परित्याग करौ यदि तामस त्याग कई जालो।7।

काया क्लेया भय का कारण जो कर्म तजि दिनी दुःख समझि
ऐसो राजस त्याग करण पर मिलि नि सकन त्याग को फल।8।

फल कैं औ आसक्ति कैं त्यागी, नियत कर्म कैं जो अर्जुन!
करनी निज कर्तव्य समझि वी सात्विक त्याग मानी जाँ छऽ।9।

दुखद कर्म को द्वेष नि हुन फिरि, हितकर में अनुराग नि हुन।
त्यागी सतोगुणी सन्यासी, संशय वीका कटी हुई। 10।

कर्मन को संपूर्ण त्याग तऽ देह धरी दपर हे नि सकनं
कर्म फलन को जो त्यागी छऽ वी यथाथ्रमें त्यागी छऽ। 11

इष्ट अलिष्ट और मिश्र छन तीन प्रकार कर्म का फल।
कर्म लिप्तकै मिलौं मरण पर, सन्यासी तैं क्ये नि हुन।12।

महाबाहु! छन पांचै कारण कोई कर्म का, बतैं दीं सुण!
सांख्य शास्त्र में कई गईं जो सब कर्मन की सिद्धिन हुण।13।

अधिष्ठान ओ कर्ता हुण चैं, करण हुनी फिरि अलग अलग।
विविध चेष्टा कतुक किसम की, पँचुवों कारण दैव हुँ छऽ। 14।

मन वाणी शरीर का द्वारा नर जे क्ये कर्म करा
न्याय और अन्याय जे करी बस य पाँचै हुतु हुनी।15।

यै पर लै जो आपणी आत्मा केवल कर्ता देखनै छऽ
बुद्धि असंस्कृत हुण का कारएा, ऊ दूर्मति क्ये देखने न्हा।16।

मैं कर्ता छूँ भाव न जैको बुद्धि कती कै लिप्त नि हुनि।
हत्या करि सब लोकन की लै, मारन न्हा वी बन्धन न्हा।17

ज्ञान ज्ञेय और ज्ञाता यो विविध **कर्म चोदना'** कईं।

करण कर्म, कर्ता कैं ऐसिकै त्रिविध कर्मसंग्रह कूनी ।18।

ज्ञान कर्म ओ कर्ता यों लै त्रिगुण भेद लै त्रिविध हुनी
कपिल सांख्य में जसिक कई छन ठीक उसी कै उनन कै सुण।19।

खंड खंड में जो अखंड कैं अविनाशी कैं देखनो छऽ
सब प्रणिन में एक भाव ले, समझ ज्ञान यो सात्विक भै।20!

अलग अलग को भेदभाव ही भिन्न भिनन नाना विधि लै
जाणण में ऊँ छऽ सब प्राणिन में, जाण् वी ज्ञान भयो राजस।21।

आपण '**खाल**' कैं सागर जाणी बिना हेतु आसक्त हई।
तत्व अर्थ बिन क्षुद्र ज्ञान जो वीकै तामस समझि लियो।22।

नियत कर्म आसक्ति रहित जो राग क्ष्ेष बिन करी जानी
फल की कोई इच्छा नी धरि उननैं थें सात्विक कूनी।23।

फल की इच्छा धरी कर्म जो, अहंकार करि करी जानी
बड़ो परिश्रम हूँ करणा में सो राजस स बस समझि लियो।24।

क्ये परिणाम? हानि या हिंसा देख नै पौरुख ओकाल होलार
मोह विवश करणै में लरगि गे वीं सब कर्म भया तामस।25।

अहंकार आसक्ति मुक्त जो धैर्यवान उत्साह भरी।
उदासीन फल सिद्धि विषय में वी कर्तासात्विक कूनी।26।

रागी फल को लोभी जै को हिंसा डाह अशुचि तन मन
हर्ष शोक लै विचलित है जौ, राजस समझौ कर्ता कन।27।

चंचल,मूढ़, घमंडी, शठ जो परहित घातक औ अलसी।
दीर्घसूत्री दुःख मुनी रूँ ऐसो हूँ कर्ता तामसी।28

बुद्धि और धृतिलै गुण कारण तीन तरह की है जानी।
अलग अलग कै कूँछ सबन कैं भलिक धनंजय ऊ लै सुण।29।

जो प्रवृत्ति निवृत्ति मार्ग कैं कार्य अकार्य अभय भय कैं
बन्ध मोक्ष कैं ठीककै समझौ, पार्थ! सात्विकी बुद्धि छ वी।30।

अधरम धरम, कुकरम सुकरम, ठीक ठीक जो समझि नि पौ।
निश्चय में संशय उपजूणी पार्थ! राजसी बुद्धि भई।31।

जो अधर्म कैधर्म कै मानि ल्हीं उज्याव कैं अन्यारपट्ट समझौ। ,
सब अर्थन कैं उल्ट सुझै द्यो पार्थ! तामसी बुद्धि भई ।32।

धृति कूनी इजो धारण करि दीं, मन इन्द्रिय प्राणन का काम
वी धृति पार्थ! भई सात्विकी, योग धरूँ अविचल अविराम।33।

धर्म अर्थ औ काम कर्म में, फल की अभिलाषा धरि पार्थ!
यथा प्रसंग जुटैं दी। तनम न, अर्जुन! धृति तामसी भईं। 34।

जैका कारण निद्रा भय कैं, शोक फिकर आलस मद कैं।
छाड़ि नि सकना मूढ़ बुद्धि जन, धृति तामसी भई अर्जुन!35।

ऐसिके सुख लै तीन तरह का मैं थें सुण हे भारत श्रेष्ठ!
रमण करी अभ्यास लै जनरा, दुख को अन्त हई जाँ छऽ 36।

पैली जो विष जस लागनो छऽ पर परिणाम हूँ अमृत जस वी
सुख थें सात्विक कूनी ऊ बुद्धि में निजानन्द बै ऊँ ।37।

स्पर्श जनित विषयेन्द्रिन को सुख, जो आरंभ में अमृत जस
पर परिणाम लागौं विष को जस ऊ सुख कई जाँ छऽ राजस।38।

आदि औ परिणाम में जो सुख आत्मा कैं मोहित करि दीं
निद्रालस्य प्रमाद इ ँउपजी, सो सुख तामस कई गयो। 39।
धरा स्वर्ग में द्याप्तन जाँ लै, कती कोई प्राणी एस न्हा।
प्रकृति बै उपजी तीन गुणन का जो प्रभव हे छुटी रईं। 40।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य शूद्र का, कर्म का ले हे अर्जुन!
अलग अलग कै जो विभाग छन, गुण स्वभाव का कारण छन।41

शम दम, तप अरु शौच सरलता, ज्ञान, दान, विज्ञान, क्षमा।
ईश्वर प्रति आस्तिक्य बुद्धि यों ब्राह्मण कर्म स्वभाव बटी।42।

शौर्य और चातुग्र, तेल धृति युद्ध भूमि है भाजौ न जो
दान और शासन की क्षमता क्षत्रिय कर्म स्वभाव बटी।43

कृषि गोरक्षा ओ वाणिज यों, वैश्य कर्म स्वाभाविक छन।
परिचर्या और शिल्प शूद्र का यैं स्वाभाविक कर्म भया।44।

निज निज कर्मन लागी हुई नर सबा सद्धिन कन पूना छन।
आपण कर्म में निरत रूण पर जसिक सिद्धि हूँ सुण वीकन।45।

जै बट सब यो उदय भई छऽ जो सबको अन्तर्यामी
निज कर्मन करि वीकी पूजा मानव हुँ छऽ सिद्धि स्वामी।

आपण धर्म गुण हीन ले भल भै, पर परधर्म सरल भल नै
करि स्वधर्म का नियत कर्म कन, पाप नि हुन रूँ उज्वल मन।47

सहज कर्म कैं आपण अर्जुन! दोषपूण्र ले छोड़िये झन।
कर्म मात्र में दोष घेरी छन, जस धूँ घेरि रूँछ चुल पन।48।

अनासक्त सर्वत्र बुद्धि छऽ आत्म जयी जी स्पृहा रहित।
परम श्रेष्ठ निष्कर्ष सिद्धि कैं सन्यासी ही प्राप्त करौं।49

सिद्धि पई उपरान्त ब्रह्म की प्राप्त जसी हूँ मैं समझूँ
यो संक्षेप में कौन्तेय! जो निष्ठा परा ज्ञान की छऽ ।50।

शुद्ध बुद्धि लै युक्त हई फिर, धृतिल ै आत्मा स्ववश करी।
इन्द्रिन का विषयन कैं छोड़ी, राग द्वेष कैं दूर धरी।51।

मिताहार एान्ति निवासी, काया, वाचा मन विजयी।
ध्यान योग में नित्य लागी हो, चित्त में हो वेराग्य छई। 52

अहंकार बल दर्प काम बै क्रोध परिग्रह आदिक बै।
मुचित हई मन निर्मम है जाँ, ब्रह्म स्वरूप प्राप्त है जौं ।53।
ब्रह्मानन्द स्वरूप प्रसन्न चित्त फिर नि करन शोच न आकोंक्षा
सब प्राणिन की तैसमान रूँ मेरी परम भक्ति पे ल्हीं।54।

भक्ति हुणा परदतत्व ज्ञान हूँ मैं जस छूँ सब विदित हुँ छऽ
मेरो तत्वज्ञान है जाण पर, मैं में ही प्रवेश करि जाँ।55।

सब कर्मन कैं करी सदा ही ल्ही केवल मेरा आश्रय।
मेरी कृपा लै प्राप्त करी ल्हीं नित्य सनातन पद अव्यय।56।

मन का द्वारा सब कर्मन को मेरी में करि ल्हे सन्यास।
बुद्धि योग को आश्रय ल्ही पर, सदा चित्त में मेरो निवास।57।

मैंमें चित धरि सब दुस्तर कैं, मेरी कृपा लै तरि जालै।
अगर नि सुणलै अहंकार वश, गति हूँ अधम उतरि जालै।58।

मै कदापि यो युद्ध करूँ नै अहंकार करि प्रण कर लै।
मिथ्या होलो निश्चय तेरो, प्रकृति विवश तू रण करलैं। 59।

स्वाभाविक ही बँधीहुई छै, कौन्तेय निज कर्मन लै।
जे नि चाहनै करण मोह वश, फिरि वी विवश हई करलै।60।

ईश्वर सब प्राणिन का भीतर अर्जुन! हृदय में बैठी रूँ।
तब वी की ही शरणपकड़ रे! सब प्रकार लै हे भारत! 61।

तब वी की ही शरण पकड़ रे! सब प्रकार लै हे भारत!
परम शान्ति वी कै प्रसाद हूँ, परम धाम वी दीं शाश्वत।62।

गोपनीय है गोपनीयतर, ज्ञान कथा मन में धरि ले।
पूर्ण रीति लै सब विचार कर, जसि इच्छा हो उस कर ले।63।

अती गोप्यतम अंतिम फिरि लै, सुणि ल्हे मेरा परम वचन।
अतिशय प्रिय छे त्वे थें कूँ छू! करण हूँ तेरो हित साधन।64।

मैं कन मन दे मेरो भक्त हो, मेरी वन्दना पूजा कर।
सत्य प्रतिज्ञा मेरी, मेरी मैं में मिल जालै मेरो प्रिय छै।65।

छाड़ि दे सब धर्मन कैं केवल, एकै मेरी शरण विचर।
मैं त्वे कन सब्बै पापन बै, मुक्त करूँलो ुकिर नि कर।66।

यो सब कूण नि चैन कभैं लै भक्तिहीन तप हीनन थें।
अथवा जो सुणनै नी चाहन, या जो मेरा निदक छन।67।

पर जो लैये गुप्त ज्ञान कैं मरा भक्तन थें कौला।
मेरी मरम भक्ति जो करलो निःसन्देह मकैं पालो।68।

मैंसन में क्वे वी है उत्तम मेरो प्रिय करणी नी इहो।
मेरी तैं लै ये पृथ्वी में वी है प्रियतर क्वे नी भैं।69।

हम द्वीनाउसंवाद रूप में धर्मशास्त्र कैं जो पढ़लो ।
मेरा मन में ज्ञान यज्ञलै ये मेरी पूजा होली।70।

दौष नि देखि जो श्रद्धा वालो, ये कन भलिक सुणी ल्हे लो
मुक्त हई शुभ लोकन में यै पुण्य कर्म लै पे ल्हेलो।71।

क्ये एकाग्रचित्त ले अर्जुन! त्वीलै या सब योग सुणी
क्ये अज्ञान मोह यो तेरो अहो धनंज्य नष्ट भयो!72।

अर्जुन बलाण
मोह नष्ट भै ज्ञान हई गो तुमार प्रसाद मेरो अच्युत

थिर छूँ मे। सन्देह न्हाति क्ये पालन करुल वचन तुमरा।73।

संजय बलाण
श्री भगवान और अर्जुन को सुणौ मैंल संवाद ऐतण!
एतुकै सब यो छऽ प्रेमामृत अद्‌भुत करणी रोम हर्षण।74।

व्यासदेव ज्यू काप्रसाद लै योरहस्य मय योग सुणी।
साक्षात येगेश्वरहरि लै श्रीमुख बै जब कयो स्वयं।75।

करि करि याद यै संवादै जो, कृष्ण और अजुन में भै।
फिरि फिरिमैं रोमांचित हूँ ऊ औरै पुण्य दीणी महाराज! 76।

फिरि फिरि याद करी श्री हरि का अति अद्‌भुत वर रूपैं को
मकैं महा अचरजइ हूँ राजन! रोमांचित हूँ पुनः पुनः।77।

छन योगेयवर कृष्ण जै तरफ, जथकैं पाथ्र धनंजय छ
श्री विभूति सब उती विजय छऽ अटल नीति यो निश्चय छऽ ।78।

यै प्रकार अमृतकलश को अठ्ठायँ अध्याय पूरो भयो

संवत् द्वी हजार अठ्ठारा कृष्ण जन्म दिन म्हैंण
अमृत कलश थापी गयो, पूरो भयो उचैण।